अध्याय १४

श्री चैतन्य महाप्रभु की बाल-लीलाएँ

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने इस अध्याय का सारांश अपने ग्रंथ *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में इस प्रकार दिया है : *"चैतन्य-चरितामृत* के इस चौदहवें अध्याय में इस दृश्य का वर्णन है कि श्री चैतन्य महाप्रभु ने किस तरह घुटने के बल सरकने, रोने, मिट्टी खाने, अपनी माता को बुद्धि देने, ब्राह्मण अतिथि पर कृपा करने, दो चोरों के कंधों पर चढ़कर उन्हें भ्रमित करके अपने ही घर पहुँचाने और बीमारी का बहाना करके एकादशी के दिन हिरण्य तथा जगदीश के घर प्रसाद ग्रहण करने की बाल-लीलाओं का आनन्द उठाया। इसी अध्याय में इसका भी वर्णन है कि वे किस तरह शरारतें करते थे, माता के बेहोश हो जाने पर किस तरह अपने सिर पर उठाकर उनके लिए नारियल लाये, किस तरह गंगा के तट पर हमउम्र लड़कियों के साथ उन्होंने परिहास किया, किस तरह लक्ष्मीदेवी से पूजा-सामग्री स्वीकार की, किस तरह कूड़े के ढेर पर बैठकर अपनी माता को दिव्य ज्ञान का उपदेश दिया और फिर किस तरह माता के कहने पर वहाँ से चले गये, और किस तरह वे अपने पिता के साथ लाड़-भरा व्यवहार करते थे।"

कथञ्चन स्मृते यस्मिन्दुष्करं सुकरं भवेत् ।
विस्मृते विपरीतं स्यात् श्री-चैतन्यं नमामि तम् ॥ १॥

कथञ्चन स्मृते यस्मिन्दुष्करं सुकरं भवेत् ।
विस्मृते विपरीतं स्यात् श्री-चैतन्यं नमामि तम् ॥ १॥

कथञ्चन—किसी भी प्रकार; **स्मृते**—स्मरण करके; **यस्मिन्**—जिनको; **दुष्करम्**—दुष्कर बातें अथवा कार्य; **सुकरम्**—सुगम; **भवेत्**—हो जाते हैं; **विस्मृते**—उनको भूलने से; **विपरीतम्**—विपरीत; **स्यात्**—हो जाते हैं; **श्री-चैतन्यम्**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु को; **नमामि**—मैं सादर प्रणाम करता हूँ; **तम्**—उनको।

अनुवाद

यदि कोई चैतन्य महाप्रभु का किसी भी प्रकार से स्मरण करता है, तो उसका कठिन कार्य सरल हो जाता है। किन्तु यदि उनका स्मरण नहीं किया जाता, तो सरल कार्य भी बड़ा कठिन बन जाता है। ऐसे चैतन्य महाप्रभु को मैं सादर नमस्कार करता हूँ।

तात्पर्य

श्रील प्रबोधानन्द सरस्वती अपने ग्रन्थ *चैतन्य-चन्द्रामृत* में कहते हैं, "महाप्रभु की रंचमात्र भी कृपा होने से मनुष्य इतना महान् बन जाता है कि उसे ऐसे मोक्ष की भी परवाह नहीं रह जाती, जिसे अनेक विद्वान तथा ज्ञानी खोजते रहते हैं। इसी तरह भगवान् चैतन्य का एक भक्त स्वर्गलोक में निवास करने को मायाजाल मानता है। वह योगशक्ति की सिद्धि को पार कर जाता है, क्योंकि उसके लिए इन्द्रियाँ विषदन्तरहित सर्प जैसी होती हैं।" सर्प अपने विषैले दाँतों के कारण अत्यन्त भयावना तथा घातक जीव होता है, किन्तु यदि ये दाँत तोड़ दिये जाते हैं, तो भय का कोई कारण नहीं रहता। योग के नियम इन्द्रियों को वश में करने के लिए हैं, किन्तु जो व्यक्ति भगवान् की सेवा में लगा रहता है, उसके लिए इन्द्रियाँ विषैले साँपों के समान भयानक नहीं रह जातीं। ये ही श्री चैतन्य महाप्रभु के उपहार हैं।

हरिभक्तिविलास से पुष्टि होती है कि यदि श्री चैतन्य महाप्रभु का स्मरण किया जाए, तो कठिन कार्य सरल हो जाता है और उन्हें भुलाने पर आसान काम भी दुष्कर बन जाते हैं। हम वास्तव में देखते हैं कि जनता की दृष्टि में जो बहुत बड़े विज्ञानी हैं, वे भी इस सरल बात को नहीं समझ सकते कि जीवन की उत्पत्ति जीवन से होती है, क्योंकि उन्हें चैतन्य महाप्रभु की कृपा प्राप्त नहीं है। वे इस गलत धारणा का बचाव करते हैं कि जीवन की उत्पत्ति पदार्थ से होती है, यद्यपि वे इसे सिद्ध नहीं कर पाते। इसीलिए इसी झूठे वैज्ञानिक

सिद्धान्त पर आगे बढ़ रही आधुनिक सभ्यता तथाकथित विज्ञानियों के लिए अनेक समस्याओं को जन्म दे रही है।

चैतन्य-चरितामृत के रचयिता महाप्रभु की बाल-लीलाओं का वर्णन करने के लिए उनकी शरण में जाते हैं, क्योंकि ऐसा दिव्य साहित्य मानसिक चिन्तन द्वारा नहीं लिखा जा सकता। पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के विषय में लिखने वाले को भगवान् की विशेष कृपा चाहिए। केवल शैक्षिक योग्यताओं से ऐसा साहित्य नहीं लिखा जा सकता।

जय जय श्री-चैतन्य, जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र, जय गौर-भक्त-वृन्द ॥२॥

जय जय श्री-चैतन्य, जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र, जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २॥

जय जय—जय हो; **श्री-चैतन्य**—चैतन्य महाप्रभु महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत आचार्य की जय हो; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—भगवान् के सभी भक्तों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु, श्री नित्यानन्द प्रभु, श्री अद्वैत प्रभु तथा चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

प्रभुर कहिल एइ जन्मलीला-सूत्र ।
यशोदा-नन्दन यैछे हैल शची-पुत्र ॥३॥

प्रभुर कहिल एइ जन्मलीला-सूत्र ।
यशोदा-नन्दन यैछे हैल शची-पुत्र ॥ ३॥

प्रभुर—महाप्रभु की; **कहिल**—मैंने कही हैं; **एइ**—इस प्रकार; **जन्म-लीला**—जन्म की लीलाएँ; **सूत्र**—सार रूप में; **यशोदा-नन्दन**—यशोदा माता के पुत्र की; **यैछे**—जिस प्रकार; **हैल**—हो गए; **शची-पुत्र**—माता शची के पुत्र।

अनुवाद

इस तरह मैंने श्री चैतन्य महाप्रभु के आविर्भाव को संक्षेप में सूत्रबद्ध

किया है, जो शचीमाता के पुत्र के रूप में उसी तरह प्रकट हुए जिस तरह माता यशोदा के पुत्र रूप में श्रीकृष्ण प्रकट हुए थे।

तात्पर्य

श्रील नरोत्तम दास ठाकुर इस कथन की पुष्टि करते हैं कि यशोदा के पुत्र भगवान् कृष्ण अब पुनः शचीमाता के पुत्र बनकर चैतन्य महाप्रभु के रूप में प्रकट हुए हैं। (*व्रजेन्द्रनन्दन येइ, शचीसुत हैल सेइ*) शचीपुत्र और कोई नहीं बल्कि माता यशोदा तथा नन्द महाराज के पुत्र हैं और नित्यानन्द प्रभु वही बलराम हैं (*बलराम हइल निताइ*)।

सङ्क्षेपे कहिल जन्मलीला-अनुक्रम ।
एबे कहि बाल्यलीला-सूत्रेर गणन ॥ ४॥

सङ्क्षेपे कहिल जन्मलीला-अनुक्रम ।
एबे कहि बाल्यलीला-सूत्रेर गणन ॥ ४॥

सङ्क्षेपे—संक्षेप में; **कहिल**—मैंने कही हैं; **जन्म-लीला**—जन्म की लीलाएँ; **अनुक्रम**—अनुक्रम से; **एबे**—अब; **कहि**—मैं कहूँगा; **बाल्य-लीला**—बाल लीलाएँ; **सूत्रेर**—रूप रेखा; **गणन**—गिनती।

अनुवाद

मैं उनके जन्म की लीलाओं का क्रमबद्ध वर्णन पहले ही कर चुका हूँ। अब मैं उनकी बाल्यकाल की लीलाओं को संक्षेप में बताऊँगा।

वन्दे चैतन्य-कृष्णस्य बाल्य-लीलां मनो-हराम् ।
लौकिकीमपि तामीश-चेष्टया वलितान्तराम् ॥ ५॥

वन्दे चैतन्य-कृष्णस्य बाल्य-लीलां मनो-हराम् ।
लौकिकीमपि तामीश-चेष्टया वलितान्तराम् ॥ ५॥

वन्दे—मैं पूजा करता हूँ; **चैतन्य-कृष्णस्य**—चैतन्य महाप्रभु की, जो स्वयं कृष्ण हैं; **बाल्य-लीला**—बाल्य लीलाएँ; **मनः-हराम्**—जो इतनी मनोहर हैं; **लौकिकीम्**—साधारण लगने वाली; **अपि**—यद्यपि; **ताम्**—उनको; **भगवत्-चेष्टया**—ईश्वर के प्राकट्य से; **वलित-अन्तराम्**—बिल्कुल उचित यद्यपि वे इससे भिन्न प्रकट होती हैं।

अनुवाद

मैं उन श्री चैतन्य महाप्रभु की बाल-लीलाओं को सादर नमस्कार करता हूँ, जो स्वयं भगवान् कृष्ण हैं। यद्यपि ऐसी लीलाएँ सामान्य बालक के कार्यकलाप के समान लगती हैं, किन्तु उन्हें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की विविध लीलाओं के रूप में समझा जाना चाहिए।

तात्पर्य

भगवद्गीता (९.११) में इस कथन की पुष्टि इस प्रकार हुई है :

अवजानन्ति मां मूढाः मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्॥

"जब मैं मनुष्य रूप में अवतरित होता हूँ, तब मूर्ख लोग मेरा उपहास करते हैं। वे मेरे दिव्य स्वभाव को तथा मेरे परम ईश्वरत्व को नहीं जानते।" पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् इस लोक में अथवा इस ब्रह्माण्ड के भीतर अपनी लीलाएँ सम्पन्न करने के लिए सामान्य मनुष्य या बालक के रूप में प्रकट होते हैं। फिर भी वे भगवान् के रूप में अपनी श्रेष्ठता बनाये रखते हैं। भगवान् कृष्ण मानव बालक के रूप में प्रकट हुए, किन्तु उनके बाल्यकाल में भी उनके असाधारण कार्यकलाप—यथा पूतना राक्षसी को मारना या गोवर्धन पर्वत को उठाना—सामान्य बालक के कार्य नहीं हैं। इसी प्रकार भगवान् चैतन्य की लीलाएँ, जिनका वर्णन आगे किया जायेगा, एक छोटे बालक के कार्यकलापों जैसी लगती हैं, किन्तु वे ऐसी असाधारण लीलाएँ हैं, जो सामान्य बालक की शक्ति के बाहर हैं।

बाल्य-लीलाय आगे प्रभुर उत्तान शयन ।
पिता-माताय देखाइल चिह्न चरण ॥६॥

बाल्य-लीलाय आगे प्रभुर उत्तान शयन ।
पिता-माताय देखाइल चिह्न चरण ॥ ६ ॥

बाल्य-लीलाय—बाल्य लीलाओं में; **आगे**—सर्वप्रथम; **प्रभुर**—महाप्रभु की; **उत्तान**—करवट लेना; **शयन**—लेटे हुए; **पिता-माताय**—माता पिता को; **देखाइल**—दिखाया; **चिह्न**—चिह्न; **चरण**—चरणकमल के।

अनुवाद

अपनी पहली बाल-लीलाओं में महाप्रभु अपने बिस्तर पर लेटे लेटे ऊपर से नीचे की ओर पलट गये और इस तरह उन्होंने अपने माता-पिता को अपने चरणकमलों के चिह्न दिखलाये।

तात्पर्य

ऊपर मुख किए हुए बिस्तर पर लेटने को या पीठ के बल लेटने के लिए भी *उत्तान* शब्द का प्रयोग किया जाता है। कुछ पुस्तकों में *उत्थान* पाठ मिलता है, जिसका अर्थ है "उठ खड़ा होना।" महाप्रभु अपनी बाल-लीलाओं में दीवाल पकड़कर खड़े होने का प्रयत्न करते थे, लेकिन जिस तरह सामान्य बालक गिर पड़ता है, उसी तरह महाप्रभु भी गिर पड़े और पुनः अपने बिस्तर पर जा लेटे।

गृहे दुई जन देखि लघुपद-चिह्न ।
ताहे शोभे ध्वज, वज्र, शङ्ख, चक्र, मीन ॥७॥

गृहे दुइ जन देखि लघुपद-चिह्न ।
ताहे शोभे ध्वज, वज्र, शङ्ख, चक्र, मीन ॥७॥

गृहे—घर पर; **दुइ जन**—माता और पिता दोनों ने; **देखि**—देखकर; **लघु-पद-चिह्न**—चरणकमल के चिह्न, जो उस समय बहुत छोटे थे; **ताहे**—उनमें; **शोभे**—जो सुन्दर रूप से; **ध्वज**—ध्वज; **वज्र**—वज्र; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **मीन**—मछली।

अनुवाद

जब महाप्रभु ने चलने का प्रयास किया, तो उनके पाँव की छोटी छोटी छाप में भगवान् विष्णु के विशिष्ट चिह्न—ध्वज, वज्र, शंख, चक्र तथा मछली—दिखलाई पड़े।

देखिया दोंहार चित्ते जन्मिल विस्मय ।
कार पद-चिह्न घरे, ना पाय निश्चय ॥८॥

देखिया दोंहार चित्ते जन्मिल विस्मय ।
कार पद-चिह्न घरे, ना पाय निश्चय ॥८॥

देखिया—ये सभी चिह्न देखकर; **दोंहार**—माता-पिता के, शची माता और जगन्नाथ मिश्र के; **चित्ते**—उनके हृदय में; **जन्मिल**—था; **विस्मय**—आश्चर्य; **कार**—जिनके; **पद-चिह्न**—पद चिह्न; **घरे**—घर पर; **ना**—नहीं; **पाय**—पाना; **निश्चय**—निश्चय।

अनुवाद

इन सारी छाप को देखकर न तो उनके पिता, न ही माता समझ पाये कि पाँवों की ये छाप किसकी हैं। इस प्रकार विस्मित होकर वे यह निश्चय नहीं कर पाये कि उनके घर में ये चिह्न कैसे आये।

मिश्र कहे,——बालगोपाल आछे शिला-सङ्गे ।
तेँहो मूर्ति हञा घरे खेले, जानि, रङ्गे ॥९॥

मिश्र कहे,——बालगोपाल आछे शिला-सङ्गे ।
तेंहो मूर्ति हञा घरे खेले, जानि, रङ्गे ॥ ९ ॥

मिश्र कहे—जगन्नाथ मिश्र ने कहा; **बाल-गोपाल**—भगवान् कृष्ण शिशु रूप में; **आछे**—हैं; **शिला-सङ्गे**—शालग्राम शिला के साथ; **तेंहो**—वे; **मूर्ति हञा**—अपना दिव्य रूप लेकर; **घरे**—कमरे में; **खेले**—खेलते हैं; **जानि**—मैं समझता हूँ; **रङ्गे**—उत्साह में।

अनुवाद

जगन्नाथ मिश्र ने कहा, "निश्चय ही बाल कृष्ण शालग्राम-शिला के साथ हैं। वे अपना बालरूप धारण करके कमरे के भीतर खेल रहे हैं।"

तात्पर्य

जब भगवान् का स्वरूप काठ, पत्थर या अन्य पदार्थ से बना होता है, तो यह समझना चाहिए कि यहाँ पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् उपस्थित हैं। हम तर्क से भी समझ सकते हैं कि सारे भौतिक तत्त्व भगवान् की शक्ति के विस्तार हैं। चूँकि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शक्ति उनके साकार रूप से अभिन्न होती है, अतएव भगवान् सदैव अपनी शक्ति में विद्यमान रहते हैं और वे भक्त की प्रबल इच्छा के फलस्वरूप अपने आपको प्रकट करते हैं। चूँकि भगवान् सर्वशक्तिमान हैं, अतएव यह तर्कसंगत ही है कि वे अपनी शक्ति से अपने आपको प्रकट कर सकते हैं। अर्चाविग्रह की पूजा या शालग्राम-शिला की पूजा मूर्ति-पूजा नहीं है। शुद्ध भक्त के घर में भगवान् का अर्चाविग्रह भगवान् के मूल दिव्य स्वरूप की तरह कार्य कर सकता है।

সেই ক্ষণে জাগি' নিমাই করয়ে ক্রন্দন ।
অঙ্কে লঞা শচী তাঁরে পিয়াইল স্তন ॥ ১০ ॥

সেই ক্ষণে জাগি' নিমাই করয়ে ক্রন্দন ।
অঙ্কে লঞা শচী তাঁরে পিয়াইল স্তন ॥ ১০ ॥

সেই ক্ষণে—তৎক্ষণ; **জাগি'**—জাগকर; **নিমাই**—নিমাই নামক ভগবান্; **করয়ে**—করতে হৈঁ; **ক্রন্দন**—রোনা; **অঙ্কে**—গোদ মেঁ; **লঞা**—লেকর; **শচী**—মাতা শচী; **তাঁরে**—উনকো; **পিয়াইল**—পিলায়া; **স্তন**—স্তনপান।

অনুবাদ

জব মাতা শচী তথা জগন্নাথ মিশ্র বাতেঁ কর রহে থে, তব বালক নিমাই জগ গয়া ঔর রোনে লগা। মাতা শচী নে উসে গোদ মেঁ উঠা লিয়া ঔর অপনে স্তন সে দূধ পিলানে লগীঁ।

স্তন পিয়াইতে পুত্রের চরণ দেখিল ।
সেই চিহ্ন পায়ে দেখি' মিশ্রে বোলাইল ॥ ১১ ॥

স্তন পিয়াইতে পুত্রের চরণ দেখিল ।
সেই চিহ্ন পায়ে দেখি' মিশ্রে বোলাইল ॥ ১১ ॥

স্তন—উনকো স্তন; **পিয়াইতে**—পান করবাতে হুএ; **পুত্রের**—অপনে পুত্র কে; **চরণ**—চরণকমল; **দেখিল**—দেখে; **সেই**—বহীঁ; **চিহ্ন**—চিহ্ন; **পায়ে**—তলবে পর; **দেখি'**—দেখকর; **মিশ্রে**—জগন্নাথ মিশ্র; **বোলাইল**—বুলায়া।

অনুবাদ

জব মাতা শচী বালক কো স্তনপান করবা রহী থীঁ, তব উন্হোঁনে অপনে পুত্র কে চরণকমল মেঁ বে সারে চিহ্ন দেখেঁ, জো উন্হেঁ কমরে কে ফর্শ পর দিখে থে। তব উন্হোঁনে জগন্নাথ মিশ্র কো বুলায়া।

দেখিয়া মিশ্রের হইল আনন্দিত মতি ।
গুপ্তে বোলাইল নীলাম্বর চক্রবর্তী ॥ ১২ ॥

দেখিয়া মিশ্রের হইল আনন্দিত মতি ।
গুপ্তে বোলাইল নীলাম্বর চক্রবর্তী ॥ ১২ ॥

देखिया—देखकर; **मिश्रेर**—जगन्नाथ मिश्र का; **हइल**—हो गया; **आनन्दित**—आनन्दित; **मति**—बुद्धि; **गुप्ते**—गुप्त रूप से; **बोलाइल**—बुलाया; **नीलाम्बर चक्रवर्ती**—नीलाम्बर चक्रवर्ती।

अनुवाद

जब जगन्नाथ मिश्र ने अपने पुत्र के तलवे पर ये अद्भुत चिह्न देखे, तो वे अत्यन्त पुलकित हुए और चुपके से उन्होंने नीलाम्बर चक्रवर्ती को बुलावा भेजा।

चिह्न देखि' चक्रवर्ती बलेन हासिया ।
लग्न गणि' पूर्वे आमि राखियाछि लिखिया ॥ १३ ॥

चिह्न देखि' चक्रवर्ती बलेन हासिया ।
लग्न गणि' पूर्वे आमि राखियाछि लिखिया ॥ १३ ॥

चिह्न देखि'—चिह्न देखकर; **चक्रवर्ती**—नीलाम्बर चक्रवर्ती; **बलेन**—कहने लगे; **हासिया**—मुस्कुराकर; **लग्न गणि'**—जन्म लग्न की ज्योतिष गणना से; **पूर्वे**—पहले; **आमि**—मैं; **राखियाछि**—रखा है; **लिखिया**—ये सब बातें लिखकर।

अनुवाद

जब नीलाम्बर चक्रवर्ती ने ये चिह्न देखे, तो हँसते हुए उन्होंने कहा, "मैंने पहले ही नक्षत्र-गणना से इसे निश्चित कर लिया था और लिख भी लिया था।

बत्रिश लक्षण——महापुरुष-भूषण ।
एइ शिशु अङ्गे देखि से सब लक्षण ॥ १४ ॥

बत्रिश लक्षण——महापुरुष-भूषण ।
एइ शिशु अङ्गे देखि से सब लक्षण ॥ १४ ॥

बत्रिश—बत्तीस; **लक्षण**—लक्षण; **महा-पुरुष**—महापुरुष; **भूषण**—आभूषण; **एइ शिशु**—यह शिशु; **अङ्गे**—शरीर पर; **देखि**—मैं देखता हूँ; **से**—उन्हें; **सब**—सब; **लक्षण**—लक्षणों को।

अनुवाद

"बत्तीस लक्षणों से महापुरुष का बोध होता है और मैं इस बालक के शरीर में इन सारे लक्षणों को देख रहा हूँ।

পঞ্চ-দীর্ঘঃ পঞ্চ-সূক্ষ্মঃ সপ্ত-রক্তঃ ষড়্-উন্নতঃ ।
ত্রি-হ্রস্ব-পৃথু-গম্ভীরো দ্বাত্রিংশল্লক্ষণো মহান্ ॥ ১৫ ॥

पञ्च-दीर्घः पञ्च-सूक्ष्मः सप्त-रक्तः षड्-उन्नतः ।
त्रि-ह्रस्व-पृथु-गम्भीरो द्वात्रिंशल्लक्षणो महान् ॥ १५ ॥

पञ्च-दीर्घः—पाँच दीर्घ; **पञ्च-सूक्ष्मः**—पाँच सूक्ष्म; **सप्त-रक्तः**—सात लाल; **षट्-उन्नतः**—छः उन्नत; **त्रि-ह्रस्व**—तीन छोटे; **पृथु**—तीन चौड़े; **गम्भीरः**—तीन गम्भीर; **द्वा-त्रिंशत्**—इस प्रकार बत्तीस; **लक्षणः**—लक्षण; **महान्**—महापुरुष के।

अनुवाद

"'महापुरुष के शरीर में ३२ लक्षण होते हैं—उसके शरीर के पाँच अंग बड़े, पाँच सूक्ष्म, सात लाल रंग के, छह उठे हुए, तीन छोटे, तीन चौड़े तथा तीन गहरे (गम्भीर) होते हैं।'

तात्पर्य

पाँच बड़े अंग हैं—नाक, बाँहें, ठुड्डी, आँखें तथा घुटने। पाँच सूक्ष्म अंग हैं—चमड़ी, अंगुली के छाप, दाँत, शरीर के रोएँ तथा सिर के बाल। सात लाल रंग वाले अंग हैं—आँखे, तलवे, हथेलियाँ, तालू, नाखून तथा ऊपर और नीचे के होंठ। छह उठे हुए अंग हैं—वक्षस्थल, कंधे, नाखून, नाक, कमर तथा मुँह। तीन छोटे अंग हैं—गर्दन, जाँघ तथा शिश्न (लिंग)। तीन चौड़े अंग हैं—कमर, ललाट तथा वक्षस्थल और तीन गहरे अंग हैं—नाभि, वाणी तथा प्राण। ये कुल बत्तीस लक्षण महापुरुष के हैं। यह उद्धरण *सामुद्रिक* से है।

নারায়ণের চিহ্ন-যুক্ত শ্রী-হস্ত চরণ ।
এই শিশু সর্ব লোকে করিবে তারণ ॥ ১৬ ॥

नारायणेर चिह्न-युक्त श्री-हस्त चरण ।
एइ शिशु सर्व लोके करिबे तारण ॥ १६ ॥

नारायणेर—भगवान् नारायण के; **चिह्न-युक्त**—चिह्नों से युक्त; **श्री-हस्त चरण**—हथेली और तला; **एइ**—यह; **शिशु**—शिशु; **सर्व लोके**—तीनों लोकों का; **करिबे** करेगा; **तारण**—उद्धार।

अनुवाद

"इस बालक की हथेलियों तथा तलवों में भगवान् नारायण के सारे लक्षण (चिह्न) हैं। यह तीनों लोकों का उद्धार करने में समर्थ होगा।

এই ত' করিবে বৈষ্ণব-ধর্মের প্রচার ।
ইহা হৈতে হবে দুই কুলের নিস্তার ॥ ১৭ ॥

এइ त' करिबे वैष्णव-धर्मेर प्रचार ।
इहा हैते हबे दुइ कुलेर निस्तार ॥ १७ ॥

एइ त'—यह शिशु; **करिबे**—करेगा; **वैष्णव**—वैष्णव धर्म या भक्ति; **धर्मेर**—धर्म का; **प्रचार**—प्रचार; **इहा हैते**—इससे; **हबे**—होगा; **दुइ**—दो; **कुलेर**—कुलों का; **निस्तार**—उद्धार।

अनुवाद

"यह बालक वैष्णव सम्प्रदाय का प्रचार करेगा और अपने मातृ तथा पितृ दोनों कुलों का उद्धार करेगा।

तात्पर्य

केवल साक्षात् नारायण या उनके प्रामाणिक प्रतिनिधि के बिना वैष्णव सम्प्रदाय या भक्ति का प्रचार अन्य कोई नहीं कर सकता। जब कोई वैष्णव जन्म लेता है, तो वह एकसाथ अपने माता तथा पिता दोनों के कुलों का उद्धार करता है।

মহোৎসব কর, সব বোলাহ ব্রাহ্মণ ।
আজি দিন ভাল,—করিব নাম-করণ ॥ ১৮ ॥

महोत्सव कर, सब बोलाह ब्राह्मण ।
आजि दिन भाल,—करिब नाम-करण ॥ १८ ॥

महोत्सव—महोत्सव; **कर**—मनाना; **सब**—सब; **बोलाह**—आमंत्रित करो; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण; **आजि**—आज; **दिन**—दिन; **भाल**—शुभ; **करिब**—मैं करूँगा; **नाम-करण**—नामकरण संस्कार।

अनुवाद

"मैं नामकरण संस्कार करना चाहता हूँ। हम उत्सव मनायें और ब्राह्मणों को बुलायें, क्योंकि आज का दिन अत्यन्त शुभ है।

तात्पर्य

यह वैदिक नियम है कि नारायण तथा ब्राह्मणों के सम्बन्ध में उत्सव मनाया जाए। बच्चे का नामकरण संस्कार *दशविध संस्कारों* में से एक है। ऐसे उत्सव के दिन नारायण की पूजा करनी चाहिए और विशेषत: ब्राह्मणों को प्रसाद बाँटना चाहिए।

जिस दिन नीलाम्बर चक्रवर्ती, शचीमाता तथा जगन्नाथ मिश्र ने महाप्रभु के चरणकमलों में अंकित चिह्नों को पहचाना था, तभी वे समझ गये थे कि बालक निमाइ कोई सामान्य बालक नहीं है, अपितु नारायण का अवतार है। अतएव उसी दिन उन्होंने निश्चय किया कि आज का यह दिन शुभ होगा, अतएव नामकरण-संस्कार सम्पन्न होना चाहिए। इस सम्बन्ध में हम यह देख सकते हैं कि किस प्रकार पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के अवतार को उनके शारीरिक चिह्नों, उनके कार्यकलापों तथा शास्त्रों की भविष्यवाणी के अनुसार सुनिश्चित किया जाता है। किसी व्यक्ति को प्रमाणों के आधार पर ईश्वर का अवतार माना जा सकता है, किन्तु धूर्तों तथा मूर्खों के मतों से या मनमाने तरीके से नहीं। श्री चैतन्य महाप्रभु के आविर्भाव के बाद बंगाल में अनेक नकली अवतार होते रहे हैं, किन्तु कोई भी निष्पक्ष भक्त या विद्वान यह समझ सकता है कि श्री चैतन्य महाप्रभु को कृष्ण के अवतार के रूप में जनमत से नहीं, अपितु शास्त्रों तथा विद्वानों के प्रमाण के अनुसार स्वीकार किया गया। जिन्होंने चैतन्य महाप्रभु को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में स्वीकार किया, वे सामान्य व्यक्ति न थे। प्रारम्भ में उनकी पहचान नीलाम्बर चक्रवर्ती जैसे प्रकाण्ड विद्वानों द्वारा की गई और बाद में उनके कार्यकलापों की पुष्टि छः गोस्वामियों द्वारा—विशेषतया श्रील जीव गोस्वामी तथा श्रील रूप गोस्वामी द्वारा और शास्त्रों के प्रमाण के आधार पर अनेक विद्वानों द्वारा की गई थी। ईश्वर का अवतार जीवन के प्रारम्भ से ही वैसा होता है। ऐसा नहीं है कि कोई ध्यान करने से एकाएक ईश्वर का अवतार बन जाता हो। ऐसे झूठे अवतार मूर्खों तथा धूर्तों के लिए होते हैं, समझदार पुरुषों के लिए नहीं।

সর্ব-লোকের করিবে ইহঁ ধারণ, পোষণ ।
'বিশ্বম্ভর' নাম ইহার,—এই ত' কারণ ॥১৯॥

सर्व-लोकेर करिबे इहँ धारण, पोषण ।
'विश्वम्भर' नाम इहार,—एइ त' कारण ॥ १९ ॥

सर्व-लोकेर—सब लोगों का; **करिबे**—करेगा; **इहँ**—यह शिशु; **धारण**—संरक्षण; **पोषण**—पोषण; **विश्वम्भर**—विश्वम्भर; **नाम**—नाम; **इहार**—इसका; **एइ**—यह; **त'**—निश्चित रूप से; **कारण**—कारण।

अनुवाद

"यह बालक भविष्य में सारे जगत् की रक्षा और पालन करेगा। इसलिए इसे विश्वम्भर नाम से पुकारा जायेगा।"

तात्पर्य

चैतन्य-भागवत से भी पुष्टि होती है कि श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने जन्म से ही सारे जगत् को शान्तिमय बनाया, जिस प्रकार भूतकाल में नारायण ने अपने वराह अवतार से इस पृथ्वी की रक्षा की थी। इस कलियुग में जगत् की रक्षा करने और पालन करने के ही कारण चैतन्य महाप्रभु विश्वम्भर कहलाते हैं, जिसका अर्थ ही है, "जो सारे विश्व का भरण (पालन) करे।" ५०० वर्ष पूर्व जब श्री चैतन्य महाप्रभु विद्यमान थे, तब उन्होंने जो आन्दोलन चलाया था, वही फिर से सारे विश्व में प्रचारित किया जा रहा है और हमें इसके व्यावहारिक परिणाम देखने को मिल रहे हैं। इस हरे कृष्ण आन्दोलन से लोगों की रक्षा और पालन किया जा रहा है। हजारों अनुयायी, विशेष करके पाश्चात्य नवयुवक इस हरे कृष्ण आन्दोलन में सम्मिलित हो रहे हैं और वे कितना सुरक्षित तथा सुखी अनुभव कर रहे हैं, इसे उनके द्वारा लिखे गये हजारों पत्रों में व्यक्त कृतज्ञता से जाना जा सकता है। विश्वम्भर नाम *अथर्ववेद संहिता* (३.३.१६.५) में भी आया है : *विश्वम्भर विश्वेन मा भरसा पाहि स्वाहा।*

শুনি' শচী-মিশ্রের মনে আনন্দ বাড়িল ।
ব্রাহ্মণ-ব্রাহ্মণী আনি' মহোৎসব কৈল ॥ ২০ ॥

शुनि' शची-मिश्रेर मने आनन्द बाड़िल ।
ब्राह्मण-ब्राह्मणी आनि' महोत्सव कैल ॥ २० ॥

शुनि'—यह सुनकर; **शची**—माता शची; **मिश्रेर**—और जगन्नाथ मिश्र के; **मने**—मन

में; **आनन्द**—आनन्द; **बाड़िल**—बढ़ गया; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण; **ब्राह्मणी**—ब्राह्मणों की पत्नियाँ; **आनि'**—उनको आमन्त्रित करके; **महोत्सव**—महोत्सव; **कैल**—मनाया।

अनुवाद

नीलाम्बर चक्रवर्ती की भविष्यवाणी सुनकर शचीमाता तथा जगन्नाथ मिश्र ने बड़े ही आनन्द के साथ सारे ब्राह्मणों और उनकी पत्नियों को आमन्त्रित करके नामकरण उत्सव सम्पन्न किया।

तात्पर्य

सभी प्रकार के उत्सवों—यथा जन्मदिन, विवाह, नामकरण, शिक्षारम्भ आदि उत्सवों को मनाना वैदिक पद्धति है, जिसमें विशेष रूप से ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया जाता है। प्रत्येक उत्सव में सर्वप्रथम ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता है और जब ब्राह्मण प्रसन्न हो जाते हैं, तो वे वैदिक मंत्रों का या हरे कृष्ण महामन्त्र का उच्चारण करके आशीर्वाद देते हैं।

তবে কত দিনে প্রভুর জানু-চঙ্ক্রমণ ।
নানা চমৎকার তথা করাইল দর্শন ॥২১॥

तबे कत दिने प्रभुर जानु-चङ्क्रमण ।
नाना चमत्कार तथा कराइल दर्शन ॥ २१ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **कत**—कुछ; **दिने**—दिन; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **जानु**—घुटने; **चङ्क्रमण**—रेंगना; **नाना**—विभिन्न; **चमत्कार**—आश्चर्यजनक; **तथा**—तथा; **कराइल**—कराया; **दर्शन**—दर्शन।

अनुवाद

कुछ दिनों के बाद महाप्रभु अपने घुटनों पर सरकने लगे और वे तरह-तरह के चमत्कार दिखलाने लगे।

तात्पर्य

चैतन्य-भागवत में वर्णन मिलता है कि एक दिन जब चैतन्य महाप्रभु घुटनों के बल सरक रहे थे और उनकी करधनी मधुर स्वर में बज रही थी, तब एक साँप निकलकर आँगन में आ गया। बालक ने उत्सुकतावश उसे पकड़ लिया, तो साँप ने उन्हें तुरन्त कुण्डली में लपेट लिया। तब शिशु के रूप

में महाप्रभु सर्प के ऊपर लेटे रहे और कुछ समय बाद वह सर्प उन्हें छोड़कर चला गया।

क्रन्दनेर छले बलाइल हरि-नाम ।
नारी सब 'हरि' बले,—हासे गौर-धाम ॥२२॥

क्रन्दनेर छले बलाइल हरि-नाम ।
नारी सब 'हरि' बले,—हासे गौर-धाम ॥ २२॥

क्रन्दनेर—रोने के; **छले**—बहाने से; **बलाइल**—बुलवाया; **हरि-नाम**—भगवान् का पावन नाम; **नारी**—महिलाएँ; **सब**—सब; **'हरि' बले**—भगवान् का पावन नाम; **हासे**—हँसते हैं; **गौर-धाम**—शिशु के रूप में श्री चैतन्य।

अनुवाद

महाप्रभु रोने के बहाने सारी स्त्रियों को हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करने के लिए बाध्य कर देते और जब वे कीर्तन करतीं तो महाप्रभु मुस्काते रहते।

तात्पर्य

चैतन्य-भागवत में यह लीला इस प्रकार वर्णित है—"सुन्दर नेत्रों वाले महाप्रभु रोने लगते, किन्तु हरे कृष्ण महामन्त्र सुनने पर वे तुरन्त चुप हो जाते। जब स्त्रियों को पता चल गया कि हरे कृष्ण कीर्तन करने पर बालक रोना बन्द कर देता है, तो वे उसके रोने पर तुरन्त ही हरे कृष्ण कीर्तन करने का संकेत समझ जातीं। इस तरह यह एक नियमित कार्य बन गया। महाप्रभु रोते और स्त्रियाँ ताली दे-देकर हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करने लगतीं। इस प्रकार पड़ोस की सारी स्त्रियाँ शचीमाता के घर में अखण्ड संकीर्तन के लिए एकत्र होतीं। जब तक स्त्रियाँ हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करतीं, तब तक महाप्रभु रोते न थे, अपितु बड़े ही मुदित मन से उन पर मुस्काते रहते।"

तबे कत दिने कैल पद-चङ्क्रमण ।
शिशु-गणे मिलि' कैल विविध खेलन ॥२३॥

तबे कत दिने कैल पद-चङ्क्रमण ।
शिशु-गणे मिलि' कैल विविध खेलन ॥ २३॥

तबे—तत्पश्चात्; **कत दिने**—कुछ दिनों में; **कैल**—किया; **पद**—पैरों पर; **चङ्क्रमण**—चलना फिरना; **शिशु-गणे**—सभी शिशु; **मिलि'**—इकट्ठे मिलकर; **कैल**—किया; **विविध**—विविध; **खेलन**—खेल, क्रीडाएँ।

अनुवाद

कुछ दिनों के बाद महाप्रभु पाँवों से चलने लगे। वे अन्य बालकों के साथ मिलने-जुलने लगे और तरह-तरह के खेल दिखाने लगे।

एकदिन शची खइ-सन्देश आनिया ।
बाटा भरि' दिया बैल,—खाओ त' बसिया ॥२४॥

एकदिन शची खइ-सन्देश आनिया ।
बाटा भरि' दिया बैल,—खाओ त' बसिया ॥ २४॥

एक-दिन—एक दिन; **शची**—माता शची; **खइ**—खइ चावल; **सन्देश**—सन्देश मिठाई; **आनिया**—लाकर; **बाटा**—टिफिन डिब्बा; **भरि'**—भरकर; **दिया**—दिया; **बैल**—कहा; **खाओ**—खाओ; **त'**—अब; **बसिया**—बैठकर।

अनुवाद

एक दिन जब महाप्रभु अन्य छोटे बालकों के साथ खेल रहे थे, तब शचीमाता खइ तथा मिष्टान से भरा थाल ले आईं और उन्होंने बालक से कहा, "बैठकर खा लो।"

एत बलि' गेला शची गृहे कर्म करिते ।
लुकाञा लागिला शिशु मृत्तिका खाइते ॥२५॥

एत बलि' गेला शची गृहे कर्म करिते ।
लुकाञा लागिला शिशु मृत्तिका खाइते ॥ २५॥

एत बलि'—यह कहकर; **गेला**—लौट गईं; **शची**—माता शची; **गृहे**—घर में; **कर्म**—काम; **करिते**—करने हेतु; **लुकाञा**—छुपाकर; **लागिला**—आरम्भ किया; **शिशु**—शिशु; **मृत्तिका**—मिट्टी; **खाइते**—खाना।

अनुवाद

किन्तु जब शचीमाता वापस जाकर गृहकार्यों में लग गईं, तो बालक अपनी माता से छिपकर मिट्टी खाने लगा।

দেখি' শচী ধাঞা আইলা করি' 'হায়, হায়' ।
মাটি কাড়ি' লঞা কহে 'মাটি কেনে খায়' ॥২৬॥

দেখি' শচী ধাঞা আইলা করি' 'হায়, হায়' ।
মাটি কাড়ি' লঞা কহে 'মাটি কেনে খায়' ॥ ২৬ ॥

দেখি'—यह देखकर; **শচী**—माता शची; **ধাঞা**—तेजी से; **আইলা**—लौट आईं; **করি'**—ऊँची आवाज में बोलती हुई; **হায়, হায়**—"यह क्या है! यह क्या है!"; **মাটি**—मिट्टी; **কাড়ি'**—छीनकर; **লঞা**—लेकर; **কহে**—उन्होंने कहा; **'মাটি কেনে খায়'**—यह बालक मिट्टी क्यों खा रहा है?

अनुवाद

यह देखकर शचीमाता हड़बड़ी में "यह क्या है! यह क्या है!" चिल्लाती हुई लौट आईं। उन्होंने महाप्रभु के हाथों से मिट्टी छीन ली और पूछा "इसे क्यों खा रहे हो?"

কান্দিয়া বলেন শিশু,—কেনে কর রোষ ।
তুমি মাটি খাইতে দিলে, মোর কিবা দোষ ॥২৭॥

কান্দিয়া বলেন শিশু,—কেনে কর রোষ ।
তুমি মাটি খাইতে দিলে, মোর কিবা দোষ ॥ ২৭ ॥

কান্দিয়া—रोते हुए; **বলেন**—कहता है; **শিশু**—शिशु; **কেনে**—क्यों; **কর**—तुम होती हो; **রোষ**—क्रुद्ध; **তুমি**—तुम; **মাটি**—मिट्टी; **খাইতে**—खाने के लिए; **দিলে**—दी; **মোর**—मुझे; **কিবা**—क्या है; **দোষ**—दोष।

अनुवाद

रोते हुए बालक ने अपनी माता से पूछा, "आप नाराज क्यों होती हैं? आपने मिट्टी ही तो खाने के लिए मुझे दी है। इसमें मेरा क्या दोष है?

খই-সন্দেশ-অন্ন যতেক—মাটির বিকার ।
এহো মাটি, সেহ মাটি, কি ভেদ-বিচার ॥২৮॥

খই-সন্দেশ-অন্ন যতেক—মাটির বিকার ।
এহো মাটি, সেহ মাটি, কি ভেদ-বিচার ॥ ২৮ ॥

खइ—खइ चावल; **सन्देश**—सन्देश मिठाई; **अन्न**—खाद्य पदार्थ; **यतेक**—सब; **माटिर**—मिट्टी के; **विकार**—विकार; **एहो**—यह भी है; **माटि**—मिट्टी; **सेह**—वह; **माटि**—मिट्टी; **कि**—क्या; **भेद**—अन्तर का; **विचार**—विचार।

अनुवाद

"खइ, सन्देश (मिठाई) तथा अन्य सारे खाद्य पदार्थ मिट्टी के ही रूपान्तर (विकार) हैं। यह भी मिट्टी है और वह भी मिट्टी है। कृपया इस पर विचार करें। इनमें अन्तर ही क्या है?

माटि—देह, माटि—भक्ष्य, देखह विचारि' ।
अविचारे देह दोष, कि बलिते पारि ॥२९॥

माटि—देह, माटि—भक्ष्य, देखह विचारि' ।
अविचारे देह दोष, कि बलिते पारि ॥ २९ ॥

माटि—मिट्टी; **देह**—यह शरीर; **माटि**—मिट्टी; **भक्ष्य**—खाद्य पदार्थ; **देखह**—जरा देखने का प्रयास करो; **विचारि'**—विचार करके; **अविचारे**—विचार किए बिना; **देह**—तुम देती हो; **दोष**—मुझे दोष; **कि**—क्या; **बलिते**—कह; **पारि**—मैं सकता हूँ।

अनुवाद

"यह शरीर मिट्टी का विकार है और खाने की वस्तुएँ (भक्ष्य) भी मिट्टी के विकार हैं। कृपया इस पर विचार करें। आप बिना विचार के मुझे दोष दे रही हैं। मैं क्या कह सकता हूँ?"

तात्पर्य

यह मायावाद दर्शन की व्याख्या है, जिसमें सारी वस्तुओं को एक-सा माना जाता है। आध्यात्मिक जीवन में खाना, सोना, मैथुन तथा अपनी रक्षा करना जैसी शरीर की आवश्यकताएँ अनावश्यक होती हैं। जब मनुष्य आध्यात्मिक धरातल पर पहुँच जाता है, तब शारीरिक आवश्यकताएँ नहीं रह जातीं और शारीरिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित कार्यों में आध्यात्मिक विचार की आवश्यकता नहीं रह जाती। दूसरे शब्दों में, जितने ही अधिक हम खाने, सोने, मैथुन तथा अपनी रक्षा करने में लगते हैं, उतने ही अधिक हम भौतिक कार्यकलापों में लिप्त होते हैं। दुर्भाग्यवश मायावादी दार्शनिक भक्ति-कार्यों को

शारीरिक कार्य मानते हैं। वे *भगवद्गीता* (१४.२६) की निम्नलिखित सरल व्याख्या को नहीं समझ पाते :

मां च योऽव्यभिचारेण भक्ति-योगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥

"जो निस्वार्थ भाव से भक्तिमय सेवा में लगता है और भगवान् की तुष्टि के लिए ऐसी सेवा करता है, वह तुरन्त ही आध्यात्मिक पद को प्राप्त होता है और उसके सारे कार्य आध्यात्मिक होते हैं।" *ब्रह्मभूयाय* ब्रह्म (आध्यात्मिक) कार्यों का सूचक है। यद्यपि मायावादी दार्शनिक ब्रह्मतेज में समा जाने के लिए अत्यन्त उत्सुक रहते हैं, किन्तु वे कोई ब्रह्म-कार्य नहीं करते। वे कुछ हद तक ब्रह्म-कार्यों की संस्तुति करते हैं, जिससे उनका अभिप्राय वेदान्त और सांख्य दर्शनों का अध्ययन ही रहता है, किन्तु उनकी व्याख्याएँ शुष्क मनोकल्पना ही होती हैं। विविध प्रकार के आध्यात्मिक कार्यों के अभाव में एकमात्र वेदान्त या सांख्य-दर्शन का अध्ययन करके बहुत दिनों तक वे उस पद पर बने नहीं रह सकते।

जीवन नाना प्रकार के आनन्द के लिए है। जीव स्वभाव से ही आनन्द भोगने का इच्छुक होता है, जैसाकि *वेदान्त-सूत्र* (१.१.१२) में कहा गया है : *आनन्दमयोऽभ्यासात्।* भक्तिमय सेवा में सभी कार्य विविधता एवं आनन्द से पूर्ण होते हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (९.२) में कहा गया है—सारे भक्ति कार्यों को करना आसान है (*सुसुखं कर्तुम्*) और वे शाश्वत तथा आध्यात्मिक हैं (*अव्ययम्*)। चूँकि मायावादी दार्शनिक इसे नहीं समझ पाते, अतएव वे भक्त के सारे कार्यों को (*श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्*) भौतिक एवं माया मानते हैं। वे इस ब्रह्माण्ड में कृष्ण के आविर्भाव एवं उनके कार्यकलापों को भी माया मानते हैं। चूँकि वे हर वस्तु को माया मानते हैं, इसलिए वे मायावादी कहलाते हैं।

वास्तव में आध्यात्मिक गुरु के निर्देशानुसार भगवान् की तुष्टि के लिए किया गया कोई भी कार्य आध्यात्मिक होता है। किन्तु ऐसे व्यक्ति के लिए जो गुरु के आदेश की अवज्ञा करे और मनमाना कार्य करते हुए अपने कार्यों को आध्यात्मिक माने, यही माया है। मनुष्य को गुरु की कृपा के माध्यम से पूर्ण

पुरुषोत्तम भगवान् की कृपा प्राप्त करनी चाहिए। अतएव मनुष्य को सर्वप्रथम गुरु को प्रसन्न करना चाहिए और यदि वे प्रसन्न हो जाते हैं, तो यह समझना चाहिए कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् भी प्रसन्न हो गये हैं। किन्तु यदि गुरु हमारे कार्यों से अप्रसन्न होते हैं, तो वे आध्यात्मिक नहीं हैं। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर इसी की पुष्टि करते हैं—*यस्य प्रसादाद् भगवत्प्रसादो यस्याप्रसादान् न गतिः कुतोऽपि।* ऐसे कार्यों को जिनसे गुरु प्रसन्न होते हैं, आध्यात्मिक मानना चाहिए और उन्हीं से भगवान् को प्रसन्न हुआ मानना चाहिए।

चैतन्य महाप्रभु ने परम गुरु के रूप में अपनी माता को मायावाद दर्शन का उपदेश दिया। शरीर मिट्टी है और खाद्यान्न भी मिट्टी है—इस कथन से उनका अभिप्राय यही था कि हर वस्तु माया है। यही मायावाद दर्शन है। मायावादियों का दर्शन दोषपूर्ण है, क्योंकि इनकी मान्यता है कि वे जो कुछ भी मूर्खतापूर्ण बात कहते हैं, उसके अतिरिक्त हर वस्तु माया है। हर वस्तु को माया समझकर मायावादी दार्शनिक भक्ति का अवसर खो देता है और इसीलिए उसका जीवन विनष्ट हो जाता है। इसलिए चैतन्य महाप्रभु ने सलाह दी है—*मायावादी भाष्य शुनिले हय सर्वनाश* (*चैतन्य चरितामृत, मध्य* ६.१६९)। जो मायावादी दर्शन को स्वीकार करता है, उसकी उन्नति सदा के लिए रुक जाती है।

অন্তরে বিস্মিত শচী বলিল তাহারে ।
"মাটি খাইতে জ্ঞান-যোগ কে শিখাল তোরে ॥৩০॥

अन्तरे विस्मित शची बलिल ताहारे ।
"माटि खाइते ज्ञान-योग के शिखाल तोरे ॥ ३० ॥

अन्तरे—मन में; **विस्मित**—विस्मित होकर; **शची**—माता शची; **बलिल**—उत्तर दिया; **ताहारे**—उनको; **माटि**—मिट्टी; **खाइते**—खाना; **ज्ञान-योग**—ज्ञान योग; **के**—कौन; **शिखाल**—सिखाया; **तोरे**—तुम्हें।

अनुवाद

शचीमाता आश्चर्यचकित थीं कि यह बालक मायावाद दर्शन बोल रहा है, अतएव वे बोलीं, "तुम्हें यह दार्शनिक तर्कवितर्क किसने सिखलाया है, जो मिट्टी खाने को सही ठहराता है?"

तात्पर्य

माता तथा पुत्र के बीच के दार्शनिक वार्तालाप में जब पुत्र ने कहा कि सारी वस्तुएँ एक-सी हैं, जैसाकि निर्विशेषवादी कहते हैं, तब माता ने उत्तर दिया, "यदि सभी वस्तुएँ एक हैं, तो सारे लोग मिट्टी से उत्पन्न अन्न खाने के बदले मिट्टी ही क्यों नहीं खाते हैं?"

माटिर विकार अन्न खाइले देह-पुष्टि हय ।
माटि खाइले रोग हय, देह याय क्षय ॥ ३१ ॥

माटिर विकार अन्न खाइले देह-पुष्टि हय ।
माटि खाइले रोग हय, देह याय क्षय ॥ ३१ ॥

माटिर—मिट्टी का; **विकार**—रूपान्तर; **अन्न**—अन्न; **खाइले**—खाने से; **देह**—शरीर की; **पुष्टि**—पुष्टि; **हय**—हो जाती है; **माटि**—मिट्टी; **खाइले**—खाने से; **रोग**—रोग; **हय**—हो जाता है; **देह**—शरीर; **याय**—हो जाता है; **क्षय**—नष्ट।

अनुवाद

दार्शनिक बालक के मायावादी विचार का उत्तर देते हुए माता शची ने कहा, "प्रिय पुत्र, यदि हम अन्न में रूपान्तरित मिट्टी खाते हैं, तो हमारे शरीर का पोषण होता है और वह हृष्ट-पुष्ट बनता है, किन्तु यदि हम कोरी मिट्टी खाते हैं, तो शरीर हृष्ट-पुष्ट होने के बजाय रुग्ण होकर नष्ट हो जाता है।

माटिर विकार घटे पानि भरि' आनि ।
माटि-पिण्डे धरि यबे, शोषि' याय पानि'' ॥ ३२ ॥

माटिर विकार घटे पानि भरि' आनि ।
माटि-पिण्डे धरि यबे, शोषि' याय पानि" ॥ ३२ ॥

माटिर—मिट्टी का; **विकार**—रूपान्तर; **घटे**—घड़े में; **पानि**—पानी; **भरि'**—भरकर; **आनि**—मैं ला सकती हूँ; **माटि**—मिट्टी का; **पिण्डे**—ढेला; **धरि**—मैं पकड़े हूँ; **यबे**—जब; **शोषि'**—सोख; **याय**—जाता है; **पानि**—पानी।

अनुवाद

"मिट्टी के ही रूपान्तर एक घड़े में मैं आसानी से पानी ला सकती हूँ,

किन्तु यदि मैं मिट्टी के ढेले पर पानी डालूँ, तो ढेला जल को सोख लेगा और मेरा परिश्रम व्यर्थ हो जायेगा।"

तात्पर्य

एक स्त्री होते हुए भी शचीमाता ने जिस सरल दर्शन का प्रतिपादन किया, वह उन मायावादी दार्शनिकों को परास्त कर सकता है, जो एक होने के विषय में चिन्तन करते हैं। मायावाद दर्शन का दोष यही है कि यह उस विविधता को स्वीकार नहीं करता, जो व्यावहारिक कार्यों के लिए उपयोगी है। शचीमाता ने उदाहरण दिया कि यद्यपि मिट्टी का ढेला तथा मिट्टी का घड़ा मूलतः एक हैं, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से घड़ा उपयोगी है, जबकि मिट्टी का ढेला व्यर्थ है। कभी-कभी वैज्ञानिक तर्क करते हैं कि पदार्थ तथा आत्मा एक हैं, उनमें कोई अन्तर नहीं है। वस्तुतः उच्च विचार की दृष्टि से पदार्थ तथा आत्मा में अन्तर नहीं है, किन्तु हमें यह व्यावहारिक ज्ञान होना चाहिए कि पदार्थ निम्न अवस्था में होने से हमारे आध्यात्मिक आनन्दमय जीवन के लिए व्यर्थ है, जबकि अध्यात्म तत्त्व सूक्ष्म अवस्था में होने के कारण आनन्द से परिपूर्ण है। इस सम्बन्ध में *भागवत* में एक दृष्टान्त दिया गया है कि मिट्टी तथा अग्नि व्यावहारिक रूप से एक से हैं। पृथ्वी से वृक्ष उगते हैं और इन वृक्षों के काष्ठ से अग्नि तथा धुआँ उत्पन्न होते हैं। फिर भी ऊष्मा के लिए हम अग्नि का प्रयोग करते हैं न कि पृथ्वी, धुएँ या काष्ठ का। इसलिए जीवन के लक्ष्य की चरम उपलब्धि के लिए हमें आत्मा की अग्नि चाहिए, पदार्थ का जड़ काष्ठ या मिट्टी नहीं।

আত্ম লুকাইতে প্রভু বলিলা তাঁহারে ।
''আগে কেন ইহা, মাতা, না শিখালে মোরে ॥৩৩॥

आत्म लुकाइते प्रभु बलिला ताँहारे ।
"आगे केन इहा, माता, ना शिखाले मोरे ॥ ३३ ॥

आत्म—स्वयं; **लुकाइते**—छुपाना; **प्रभु**—महाप्रभु; **बलिला**—उत्तर दिया; **ताँहारे**—शची माता को; **आगे**—आरम्भ में; **केन**—क्यों; **इहा**—यह; **माता**—प्रिय माता; **ना शिखाले**—आपने नहीं सिखाया; **मोरे**—मुझे।

अनुवाद

महाप्रभु ने अपनी माता से कहा, "आपने पहले ही मुझे यह व्यावहारिक दर्शन क्यों नहीं सिखलाया? आपने आत्म-साक्षात्कार की यह विधि मुझसे क्यों छिपा रखी?

तात्पर्य

यदि किसी को जीवन के प्रारम्भ से द्वैत वैष्णव-दर्शन की शिक्षा दी जाए, तो उसे एकेश्वरवादी दर्शन अधिक परेशान नहीं करेगा। वास्तव में, हर वस्तु परम उद्गम से उद्भूत है (*जन्माद्यस्य यतः*)। मूल शक्ति अनेक प्रकार से प्रदर्शित होती है, जिस प्रकार सूर्य-प्रकाश, जो सूर्य से उद्भूत होकर प्रकाश तथा ऊष्मा के रूप में प्रदर्शित होता है। कोई यह नहीं कह सकता कि प्रकाश ऊष्मा है और ऊष्मा प्रकाश। फिर भी एक को दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता। अतएव चैतन्य महाप्रभु का दर्शन *अचिन्त्य-भेदाभेद* है। यद्यपि प्रकाश तथा ऊष्मा के भौतिक प्रदर्शन में सम्बन्ध है, फिर भी वे भिन्न हैं। इसी प्रकार सारा जगत् भगवान् की शक्ति की अभिव्यक्ति है, फिर भी यह शक्ति अनेक रूपों में प्रकट होती है।

এবে সে জানিলাঁ, আর মাটি না খাইব ।
ক্ষুধা লাগে যবে, তবে তোমার স্তন পিব'' ॥৩৪॥

एबे से जानिलाँ, आर माटि ना खाइब ।
क्षुधा लागे यबे, तबे तोमार स्तन पिब" ॥ ३४॥

एबे—अब; **से**—वह; **जानिलाँ**—मैं समझ गया हूँ; **आर**—और अधिक; **माटि**—मिट्टी; **ना**—नहीं; **खाइब**—मैं खाऊँगा; **क्षुधा**—भूख; **लागे**—लगती है; **यबे**—जब; **तबे**—उस समय; **तोमार**—आपका; **स्तन**—स्तन; **पिब**—मैं पिऊँगा।

अनुवाद

"अब मैं समझा इस दर्शन को। अब मैं मिट्टी नहीं खाऊँगा। जब भी मुझे भूख लगेगी, मैं आपके स्तनों से दुग्ध का पान करूँगा।"

এত বলি' জননীর কোলেতে চড়িয়া ।
স্তন পান করে প্রভু ঈষৎ হাসিয়া ॥৩৫॥

एत बलि' जननीर कोलेते चड़िया ।
स्तन पान करे प्रभु ईषत् हासिया ॥ ३५ ॥

एत बलि'—यह रहकर; **जननीर**—माता की; **कोलेते**—गोद में; **चड़िया**—चढ़कर; **स्तन पान**—स्तन पान; **करे**—करते हैं; **प्रभु**—महाप्रभु; **ईषत्**—थोड़ा सा; **हासिया**—मुस्कुराकर।

अनुवाद

यह कहकर महाप्रभु धीरे से हँसते हुए अपनी माता की गोद में चढ़ गये और उनका स्तनपान करने लगे।

এইমতে নানা-ছলে ঐশ্বর্য দেখায় ।
বাল্য-ভাব প্রকটিয়া পশ্চাৎ লুকায় ॥ ৩৬ ॥

এइমতে নানা-ছলে ঐশ্বর্য্য দেখায় ।
বাল্য-ভাব প্রকটিয়া পশ্চাত্ লুকায় ॥ ৩৬ ॥

এइমতে—इस प्रकार; **নানা-ছলে**—विविध बहानों से; **ऐশ্বর্য্য**—ऐश्वर्य; **দেখায়**—दिखाते हैं; **বাল্য-ভাব**—शिशु का भाव; **প্রকটিয়া**—प्रकट करके; **পশ্চাত্**—बाद; **লুকায়**—अपने आपको छुपा लेते हैं।

अनुवाद

इस तरह महाप्रभु अपने बचपन में विविध बहानों से अपना अधिक से अधिक ऐश्वर्य प्रदर्शित करते और इन ऐश्वर्यों को दिखला चुकने के बाद वे स्वयं को छिपा लेते।

অতিথি-বিপ্রের অন্ন খাইল তিন-বার ।
পাছে গুপ্তে সেই বিপ্রে করিল নিস্তার ॥ ৩৭ ॥

অতিথি-বিপ্রের অন্ন খাइল তিন-বার ।
পাছে গুপ্তে সেइ বিপ্রে করিল নিস্তার ॥ ৩৭ ॥

অতিথি—अतिथि; **বিপ্রের**—ब्राह्मण का; **অন্ন**—अन्न; **খাइল**—खाया; **তিন-বার**—तीन बार; **পাছে**—बाद में; **গুপ্তে**—गुप्त रूप से; **সেइ**—उस; **বিপ্রে**—ब्राह्मण का; **করিল**—किया; **নিস্তার**—उद्धार।

अनुवाद

एक बार महाप्रभु एक ब्राह्मण अतिथि के भोजन को तीन बार खा गये और बाद में उन्होंने गुप्त रूप से उस ब्राह्मण का भवबन्धन से उद्धार कर दिया।

तात्पर्य

इस ब्राह्मण के उद्धार की कथा इस प्रकार है। एक बार एक ब्राह्मण जो देशाटन के लिए निकला था, एक तीर्थ की यात्रा करके दूसरे तीर्थ होता हुआ नवद्वीप पहुँचा और वहाँ जगन्नाथ मिश्र के घर में अतिथि बना। जगन्नाथ मिश्र ने उसे भोजन बनाने के लिए सारी सामग्री दे दी और उस ब्राह्मण ने भोजन तैयार किया। किन्तु जब यह ब्राह्मण ध्यानमग्न होकर भगवान् विष्णु को भोजन अर्पित कर रहा था, तब बालक निमाइ वहाँ आकर उसे खाने लगा। फलतः ब्राह्मण ने सोचा कि यह भोग व्यर्थ हो गया है। अतएव जगन्नाथ मिश्र के कहने पर उसने दुबारा भोजन पकाया, किन्तु जब वह ध्यान कर रहा था, तो बालक फिर वहाँ आया और भोजन खाने लगा और भोग को इस प्रकार उसने पुनः नष्ट कर दिया। जगन्नाथ मिश्र के अनुनय-विनय करने पर उस ब्राह्मण ने तीसरी बार भोजन पकाया, किन्तु इस बार भी महाप्रभु ने आकर भोजन को जूठा कर दिया, यद्यपि इस बालक को एक कमरे में बन्द कर दिया गया था और सभी लोग सो रहे थे, क्योंकि काफी रात हो चुकी थी। अतएव ब्राह्मण ने यह सोचा कि भगवान् विष्णु आज मेरे भोजन को स्वीकार नहीं करना चाहते हैं और मुझे उपवास ही करना पड़ेगा। फलतः वह क्षुब्ध होकर चिल्लाने लगा, "हाय! हाय! क्या हो गया! क्या हो गया!" जब चैतन्य महाप्रभु ने ब्राह्मण को उस क्षुब्ध अवस्था में देखा तो वे उससे बोले, "पूर्वजन्म में मैं माता यशोदा का पुत्र था। उस समय भी तुम नन्द महाराज के घर अतिथि रूप में आये थे और मैंने तुम्हें इसी तरह तंग किया था। मैं तुम्हारी भक्ति से अतीव प्रसन्न हूँ, इसलिए मैं तुम्हारे हाथों से बनाया हुआ भोजन खा रहा हूँ।" यह समझकर कि महाप्रभु उस पर कृपा कर रहे हैं, ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और वह कृष्ण-प्रेम से गद्‌गद् हो उठा। वह भगवान् का आभारी था और उसने अपने आपको परम भाग्यशाली माना। तब महाप्रभु ने कहा कि वह इस घटना के बारे में किसी

को न बताये। यह घटना *चैतन्य-भागवत* आदिखण्ड के तीसरे अध्याय में विस्तार से वर्णित है।

चोरे लञा गेल प्रभुके बाहिरे पाइया ।
तार स्कन्धे चड़ि' आइला तारे भुलाइया ॥ ३८ ॥

चोरे लञा गेल प्रभुके बाहिरे पाइया ।
तार स्कन्धे चड़ि' आइला तारे भुलाइया ॥ ३८ ॥

चोरे—दो चोर; **लञा**—लेकर; **गेल**—गये; **प्रभुके**—महाप्रभु को; **बाहिरे**—बाहर; **पाइया**—पाकर; **तार**—उनके; **स्कन्धे**—कन्धों पर; **चड़ि'**—चढ़कर; **आइला**—वापस आये; **तारे**—उनको; **भुलाइया**—भ्रमित करके।

अनुवाद

बचपन में महाप्रभु को दो चोर उठाकर उनके घर के बाहर ले गये। किन्तु महाप्रभु उन चोरों के कंधे पर चढ़ गये और जब वे सोच रहे थे कि हम इस बालक के आभूषण आराम से उतार लेंगे, तो महाप्रभु ने उन्हें भ्रमित कर दिया, जिससे वे चोर अपने घर जाने के बदले जगन्नाथ मिश्र के घर वापस जा पहुँचे।

तात्पर्य

बचपन में महाप्रभु सोने के आभूषणों से लदे रहते थे। एक बार जब वे घर के बाहर खेल रहे थे, तब दो चोर उनकी गली से होकर निकले। वे गहने लूटने की ताक में थे, अतः उन्होंने महाप्रभु को कुछ मिठाई देकर फुसला लिया और अपने कन्धों पर चढ़ा लिया। चोरों ने सोचा था कि वे बालक को जंगल ले जाकर मार डालेंगे और गहने निकाल लेंगे। किन्तु महाप्रभु ने चोरों के ऊपर अपनी ऐसी माया फैलायी, जिससे वे जंगल की ओर जाने के बदले महाप्रभु के ही दरवाजे पर वापस जा पहुँचे। जब वे उनके घर के सामने आ गये, तो वे डर गये, क्योंकि जगन्नाथ मिश्र तथा पड़ोस के सभी लोग बच्चे की तलाश में थे। अतएव चोरों ने वहाँ रुकने में खतरा समझा। वे उन्हें वहीं छोड़कर चलते बने। तब बालक को घर के अन्दर लाया गया और शचीमाता को दिया गया, क्योंकि वे अत्यन्त चिन्तित थीं। तब जाकर वे सन्तुष्ट हुईं। यह

घटना का *चैतन्य-भागवत* के आदि खण्ड के तृतीय अध्याय में विस्तार से वर्णन किया गया है।

व्याधि-छले जगदीश-हिरण्य-सदने ।
विष्णु-नैवेद्य खाइल एकादशी-दिने ॥ ३९॥

व्याधि-छले जगदीश-हिरण्य-सदने ।
विष्णु-नैवेद्य खाइल एकादशी-दिने ॥ ३९ ॥

व्याधि-छले—बीमार होने के बहाने; **जगदीश-हिरण्य**—जगदीश और हिरण्य नाम के; **सदने**—के घर; **विष्णु-नैवेद्य**—भगवान् विष्णु को अर्पित भोजन; **खाइल**—खाया; **एकादशी**—एकादशी; **दिने**—के दिन।

अनुवाद

महाप्रभु ने बीमार होने के बहाने एकादशी के दिन हिरण्य तथा जगदीश के घर से कुछ भोजन माँगा।

तात्पर्य

चैतन्य-भागवत, आदिखण्ड के छठे अध्याय में एकादशी के दिन जगदीश तथा हिरण्य के घर विष्णु-प्रसाद ग्रहण करने का पूरा विवरण दिया हुआ है। एकादशी के दिन भगवान् विष्णु को नियमित भोग चढ़ाया जाता है, क्योंकि उस दिन भक्त तो उपवास रखते हैं, लेकिन विष्णु भगवान् नहीं। एक बार एकादशी के दिन जगदीश तथा हिरण्य पण्डित के घर भगवान् विष्णु के लिए विशेष प्रसाद तैयार करने का आयोजन था। चैतन्य महाप्रभु ने अपने पिता से कहा "मैं बीमार हूँ। आप वहाँ जाकर विष्णु-प्रसाद लें आयें।" जगदीश तथा हिरण्य का मकान जगन्नाथ मिश्र के मकान से लगभग दो मील की दूरी पर था। अतएव जब चैतन्य महाप्रभु के अनुनय-विनय पर जगन्नाथ मिश्र प्रसाद लेने गये, तो जगदीश तथा हिरण्य थोड़ा विस्मित हुए। भला उस बालक को कैसे पता चला कि विष्णु के लिए विशेष प्रसाद बन रहा है? वे तुरन्त समझ गये कि निमाइ बालक में दैवी योगशक्ति है, अन्यथा वह कैसे जान पाता कि विशेष प्रसाद बन रहा है? अतएव उन्होंने तुरन्त ही बालक के पिता जगन्नाथ मिश्र के हाथों चैतन्य महाप्रभु के लिए प्रसाद भेज दिया। निमाइ बीमार थे, किन्तु विष्णु-

प्रसाद खाते ही वे स्वस्थ हो गये और उन्होंने वह प्रसाद अपने संगियों में बाँट दिया।

শিশু সব লয়ে পাড়া-পড়সীর ঘরে ।
চুরি করি' দ্রব্য খায় মারে বালকেরে ॥ ৪০ ॥

शिशु सब लये पाड़ा-पड़सीर घरे ।
चुरि करि' द्रव्य खाय मारे बालकेरे ॥ ४० ॥

शिशु—शिशु; **सब**—सब; **लये**—उनके साथ लेकर; **पाड़ा-पड़सीर**—पड़ोसी; **घरे**—घरों में; **चुरि करि'**—चोरी करते; **द्रव्य**—खाद्य सामग्री; **खाय**—खाते; **मारे**—लड़ते; **बालकेरे**—अन्य बालकों के साथ।

अनुवाद

जैसाकि बच्चों में होता है, महाप्रभु ने खेलना सीखा और वे अपने मित्रों के साथ पड़ोसी मित्रों के घरों में जाते, उनकी खाने की वस्तुएँ चुराते और खाते। कभी-कभी बच्चे परस्पर लड़ते-झगड़ते।

শিশু সব শচী-স্থানে কৈল নিবেদন ।
শুনি' শচী পুত্রে কিছু দিলা ওলাহন ॥ ৪১ ॥

शिशु सब शची-स्थाने कैल निवेदन ।
शुनि' शची पुत्रे किछु दिला ओलाहन ॥ ४१ ॥

शिशु सब—सब बालक; **शची-स्थाने**—माता शची की उपस्थिति में; **कैल**—किया; **निवेदन**—निवेदन; **शुनि'**—उसे सुनकर; **शची**—माता शची; **पुत्रे**—अपने पुत्र की; **किछु**—कुछ; **दिला**—दिया; **ओलाहन**—उलाहना।

अनुवाद

सारे बच्चों ने शचीमाता से शिकायत की कि महाप्रभु उनसे लड़ते हैं और पड़ोसियों के घरों से चीजें चुराते हैं। फलस्वरूप कभी-कभी माता अपने पुत्र को दण्ड देती अथवा डाँटती रहती थीं।

"কেনে চুরি কর, কেনে মারহ শিশুরে ।
কেনে পর-ঘরে যাহ, কিবা নাহি ঘরে" ॥ ৪২ ॥

"केने चुरि कर, केने मारह शिशुरे ।
केने पर-घरे ग्राह, किबा नाहि घरे" ॥ ४२ ॥

केने चुरि कर—तुम चोरी क्यों करते हो; **केने मारह शिशुरे**—अन्य शिशुओं को क्यों मारते हो; **केने**—क्यों; **पर-घरे**—दूसरों के घरों में; **ग्राह**—तुम जाते हो; **किबा**—क्या; **नाहि**—नहीं है; **घरे**—तुम्हारे अपने घर में।

अनुवाद

शचीमाता ने कहा—"तुम दूसरों की चीजें क्यों चुराते हो? तुम दूसरे लड़कों को क्यों मारते हो? तुम दूसरों के घर के भीतर क्यों जाते हो? आखिर तुम्हारे घर में कौन-सी चीज नहीं है?"

तात्पर्य

वेदान्त-सूत्र के अनुसार (*जन्माद्यस्य यतः*) सृष्टि, पालन तथा संहार तीनों ही परम पूर्ण में स्थित हैं। अतएव इस भौतिक जगत् में हम जो कुछ भी देखते हैं, वह पहले से आध्यात्मिक जगत् में रहता है। श्री चैतन्य महाप्रभु साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण हैं। तो फिर वे क्यों चुराने तथा झगड़ने लगे? वे ऐसा न चोर के रूप में और न शत्रु के रूप में करते हैं बल्कि प्रेमावस्था में मित्र के रूप में करते हैं। वे बालक रूप में चोरी करते हैं, इसलिए नहीं कि उन्हें कोई कमी है, अपितु अपने बाल-स्वभाव के कारण। इस भौतिक जगत् में भी कभी-कभी छोटे बच्चे पड़ोस के घर में जाकर चोरी करते हैं और कभी-कभी लड़ते-भिड़ते हैं, किन्तु किसी शत्रुता या दुर्भावना से नहीं। कृष्ण भी अन्य बालकों की तरह अपने बचपन में ये सारे कार्य करते थे। यदि आध्यात्मिक जगत् में चुराने की प्रवृत्ति और लड़ने की प्रवृत्ति न होती, तो ये इस भौतिक जगत् में भी न पाई जाती। भौतिक जगत् तथा आध्यात्मिक जगत् में इतना ही अन्तर है कि आध्यात्मिक जगत् में मैत्री और प्रेमवश चोरी की जाती है, जबकि इस भौतिक जगत् में लड़ाई तथा चोरी शत्रुता और द्वेष के आधार पर की जाती है। इसीलिए हमें समझना चाहिए कि ये सारे कार्य आध्यात्मिक जगत् में होते हैं, किन्तु उनमें कोई दोष नहीं होता, जबकि भौतिक जगत् में ये सारे कार्य दुःखों से भरे होते हैं।

শুনি' ক্রুদ্ধ হঞা প্রভু ঘর-ভিতর যাঞা ।
ঘরে যত ভাণ্ড ছিল, ফেলিল ভাঙ্গিয়া ॥ ৪৩ ॥

শুনি' ক্রুদ্ধ হঞা প্রভু ঘর-ভিতর যাঞা ।
ঘরে যত ভাণ্ড ছিল, ফেলিল ভাঙ্গিয়া ॥ ৪৩ ॥

শুনি'—সুনকर; **ক্রুদ্ধ**—ক্রুদ্ধ; **হঞা**—होकर; **প্রভু**—महाप्रभु; **ঘর-ভিতর**—कमरे में; **যাঞা**—जाकर; **ঘরে**—कमरे में; **যত**—सब; **ভাণ্ড**—बर्तन; **ছিল**—वहाँ थे; **ফেলিল**—उनको फेंक दिया; **ভাঙ্গিয়া**—तोड़कर।

অনুবাদ

इस प्रकार माता की डाँट खाकर महाप्रभु क्रोधित होकर कमरे के भीतर चले जाते और वहाँ पर सारे बर्तन तोड़-फोड़ देते।

তবে শচী কোলে করি' করাইল সন্তোষ ।
লজ্জিত হইলা প্রভু জানি' নিজ-দোষ ॥ ৪৪ ॥

তবে শচী কোলে করি' করাইল সন্তোষ ।
লজ্জিত হইলা প্রভু জানি' নিজ-দোষ ॥ ৪৪ ॥

তবে—उस समय; **শচী**—माता शचीदेवी; **কোলে**—गोद में; **করি'**—लेकर; **করাইল**—किया; **সন্তোষ**—सन्तुष्ट; **লজ্জিত**—लज्जित; **হইলা**—हो गये; **প্রভু**—महाप्रभु; **জানি'**—जानकर; **নিজ**—अपना; **দোষ**—दोष।

অনুবাদ

तब शचीमाता अपने पुत्र को गोद में लेकर चुप करातीं और महाप्रभु अपनी गलतियाँ स्वीकार करते और काफी लज्जित होते।

তাৎপর্য

चैतन्य-भागवत आदिखण्ड, अध्याय तीन में महाप्रभु के बाल्यकाल के दोषों का सुन्दर वर्णन है, जिसमें यह कहा गया है कि बचपन में महाप्रभु पड़ोसी दोस्तों के घरों से खाने की चीजें चुराया करते थे। कुछ घरों से वे दूध चुराते और पी जाते। कुछ घरों से भात चुराते और खा जाते। कभी-कभी पकाने के बर्तन तोड़ डालते। यदि कुछ खाने को न मिलता और घर में छोटे बच्चे मिलते तो उन्हें तंग करते और रुलाते। कभी-कभी कोई पड़ोसी आकर

शचीमाता से शिकायत करता, "मेरा बच्चा बहुत छोटा है, किन्तु आपका लड़का मेरे बच्चे के कानों में पानी भरकर उसे रुला देता है।"

কভু মৃদু-হস্তে কৈল মাতাকে তাড়ন ।
মাতাকে মূর্চ্ছিতা দেখি' করয়ে ক্রন্দন ॥ ৪৫ ॥

কভু মৃদু-হস্তে কৈল মাতাকে তাড়ন ।
মাতাকে মূর্চ্ছিতা দেখি' করয়ে ক্রন্দন ॥ ৪৫ ॥

কভু—कभी-कभी; **মৃদু-হস্তে**—अपने कोमल हाथ से; **কৈল**—किया; **মাতাকে**—अपना माता; **তাড়ন**—झिड़कना; **মাতাকে**—अपनी माता को; **মূর্চ্ছিতা**—मूर्च्छित; **দেখি'**—देखकर; **করয়ে**—करते; **ক্রন্দন**—रोने लगते।

अनुवाद

एक बार बालक चैतन्य ने अपनी माता को अपने कोमल हाथ से मारा, तो उनकी माता दिखावे के लिए मूर्च्छित हो गईं। यह देखकर चैतन्य महाप्रभु रोने लगे।

নারীগণ কহে,—"নারিকেল দেহ আনি' ।
তবে সুস্থ হইবেন তোমার জননী" ॥ ৪৬ ॥

নারীগণ কহে,—"নারিকেল দেহ আনি' ।
তবে সুস্থ হইবেন তোমার জননী" ॥ ৪৬ ॥

নারী-গণ—सभी महिलाएँ; **কহে**—कहती हैं; **নারিকেল**—नारियल; **দেহ**—दो; **আনি'**—कहीं से लाकर; **তবে**—तब; **সুস্থ হইবেন**—स्वस्थ हो जायेगी; **তোমার**—तुम्हारी; **জননী**—माता।

अनुवाद

पड़ोस की स्त्रियों ने उनसे कहा, "बेटा, जाकर कहीं से एक नारियल ले आओ। तब तुम्हारी माता स्वस्थ होंगी।"

বাহিরে যাঞা আনিলেন দুই নারিকেল ।
দেখিয়া অপূর্ব হৈল বিস্মিত সকল ॥ ৪৭ ॥

बाहिरे ग्राञा आनिलेन दुइ नारिकेल ।
देखिया अपूर्व हैल विस्मित सकल ॥ ४७॥

बाहिरे—बाहर; **ग्राञा**—जाकर; **आनिलेन**—वे तत्काल ले आये; **दुइ**—दो; **नारिकेल**—नारियल; **देखिया**—देखकर; **अपूर्व**—यह आश्चर्य; **हैल**—हो गये; **विस्मित**—चकित; **सकल**—सभी।

अनुवाद

वे घर से बाहर गये और तुरन्त ही दो नारियल ले आये। सारी स्त्रियाँ ऐसा अद्भुत कार्य देखकर विस्मित हो गईं।

কভু শিশু-সঙ্গে স্নান করিল গঙ্গাতে ।
কন্যাগণ আইলা তাহাঁ দেবতা পূজিতে ॥ ৪৮॥
কভু শিশু-সঙ্গে স্নান করিল গঙ্গাতে ।
কন্যাগণ আইলা তাহাঁ দেবতা পূজিতে ॥ ৪৮॥

কভু—কভী-কভী; **শিশু-সঙ্গে**—অন্য বালকों के साथ; **স্নান**—स्नान; **করিল**—करते; **গঙ্গাতে**—गंगा में; **কন্যা-গণ**—लड़कियाँ; **আইলা**—वहाँ आ गईं; **তাহাঁ**—गंगा तट पर; **দেবতা**—देवता; **পূজিতে**—पूजा करने के लिए।

अनुवाद

कभी-कभी महाप्रभु अन्य बालकों के साथ गंगा नदी में स्नान करने जाते और पास की लड़कियाँ भी वहीं पर देवताओं की पूजा करने आतीं।

तात्पर्य

वैदिक प्रथा के अनुसार दस-बारह वर्ष की कन्याएँ गंगा नदी के तट पर जाकर स्नान करतीं और भविष्य में अच्छा वर पाने के लिए शिवजी की पूजा करती थीं। वे शिव जैसे पति की कामना करतीं, क्योंकि शिवजी अत्यन्त शान्त होने के साथ ही अत्यधिक शक्तिशाली भी हैं। इसीलिए पहले हिन्दू परिवारों की छोटी-छोटी लड़कियाँ शिवजी की पूजा वैशाख मास (अप्रैल-मई) में विशेष रूप से करती थीं। गंगा में स्नान करना हर एक के लिए, न केवल बड़ों के लिए अपितु छोटों के लिए भी अत्यधिक प्रसन्नता की बात होती है।

গঙ্গা-স্নান করি' পূজা করিতে লাগিলা ।
কন্যাগণ-মধ্যে প্রভু আসিয়া বসিলা ॥ ৪৯ ॥

গঙ্গা-স্নান করি' পূজা করিতে লাগিলা ।
কন্যাগণ-মধ্যে প্রভু আসিয়া বসিলা ॥ ৪৯ ॥

গঙ্গা-স্নান—गंगास्नान; **করি'**—करके; **পূজা**—पूजा; **করিতে**—करना; **লাগিলা**—आरम्भ किया; **কন্যা-গণ**—लड़कियों; **মধ্যে**—के बीच में; **প্রভু**—महाप्रभु; **আসিয়া**—आकर; **বসিলা**—बैठ गये।

अनुवाद

जब कन्याएँ गंगास्नान करके विभिन्न देवताओं की पूजा करने लगतीं, तो बालक महाप्रभु वहाँ आते और उनके बीच में बैठ जाते।

কন্যারে কহে,—আমা পূজ, আমি দিব বর ।
গঙ্গা-দুর্গা—দাসী মোর, মহেশ—কিঙ্কর ॥ ৫০ ॥

কন্যারে কহে,—আমা পূজ, আমি দিব বর ।
গঙ্গা-দুর্গা—দাসী মোর, মহেশ—কিঙ্কর ॥ ৫০ ॥

কন্যারে কহে—कन्याओं की सम्बोधित करके महाप्रभु कहते; **আমা পূজ**—"मेरी पूजा करो"; **আমি**—मैं; **দিব**—दूँगा; **বর**—उत्तम पति; **গঙ্গা**—गंगा; **দুর্গা**—दुर्गा देवी; **দাসী**—दासियाँ; **মোর**—मेरे; **মহেশ**—शिवजी; **কিঙ্কর**—दास।

अनुवाद

महाप्रभु कन्याओं को सम्बोधित करके कहते, "मेरी पूजा करो, तो मैं तुम्हें सुन्दर पति या सुन्दर वरदान दूँगा। गंगा तथा देवी दुर्गा मेरी दासियाँ हैं और अन्य देवताओं की बात तो दूर रही, शिवजी तक मेरे दास हैं।"

तात्पर्य

अन्य धर्म के लोगों में, यथा ईसाइयों तथा मुसलमानों में ऐसी गलत धारणा है कि हिन्दू धर्म में अनेक ईश्वर हैं। वास्तव में यह हकीकत नहीं है। ईश्वर एक हैं, लेकिन ऐसे अन्य अनेक शक्तिमान जीव हैं, जो प्रशासन के विभिन्न विभागों का कार्यभार संभालते हैं। वे देवता कहलाते हैं। सारे देवता पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के आदेशों का पालन करने वाले दास हैं। चैतन्य महाप्रभु

ने इस तथ्य को अपने बाल्यकाल में प्रकट किया। कभी-कभी लोग अज्ञानवश किसी विशेष वर की प्राप्ति के लिए देवताओं की पूजा करते हैं, किन्तु यदि कोई पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का भक्त और उपासक बन जाए, तो उसे वर की प्राप्ति के लिए देवताओं के पास जाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि भगवान् की कृपा से उसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है। *भगवद्गीता* (७.२०, २८) में ऐसी देव-पूजा की भर्त्सना की गई है :

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥

"जिनकी बुद्धि हर ली गई है और जो कामवासनाओं के कारण पागल हो चुके हैं, वे देवताओं की पूजा करते हैं और अपने-अपने स्वभावों के अनुसार पूजा के विशेष विधानों का पालन करते हैं। (*भगवद्गीता* ७.२०) :

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः॥

"किन्तु जो लोग सारे पापकर्मों तथा द्वन्द्व से मुक्त हैं, वे दृढ़ता के साथ पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की पूजा में लग जाते हैं।" (*भगवद्गीता* ७.२८) केवल मूर्ख ही अपने विविध प्रयोजनों के लिए देवताओं की पूजा करते हैं। किन्तु जो अत्यन्त बुद्धिमान हैं, वे केवल पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की ही पूजा करते हैं।

कभी-कभी हम पर, कृष्णभावनामृत आन्दोलन के सदस्यों पर आरोप लगाया जाता है कि हम देवताओं की पूजा का समर्थन नहीं करते। किन्तु जब चैतन्य महाप्रभु तथा भगवान् कृष्ण ने इसकी भर्त्सना की है, तो हम इसका समर्थन कैसे कर सकते हैं? भला हम अन्य लोगों को मूर्ख तथा *हृतज्ञान* (बुद्धि हीन) कैसे होने दे सकते हैं? हमारा प्रचार तो इतना ही है कि बुद्धिमान लोग पदार्थ तथा आत्मा के अन्तर को समझें और उन पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को समझें, जो परिपूर्ण आध्यात्मिक अस्तित्व हैं। यही हमारा जीवन-कार्य है। भला हम इस भौतिक जगत् के भौतिक शरीरों में विद्यमान तथाकथित देवताओं की पूजा करने के लिए लोगों को दिग्भ्रमित कैसे कर सकते हैं? हमारे द्वारा सैकड़ों देवताओं की पूजा की अनुमति न देने की स्थिति की पुष्टि चैतन्य

महाप्रभु द्वारा उनके बाल्यकाल में ही की गई थी। इस सम्बन्ध में श्रील नरोत्तम दास ठाकुर ने गाया है :

अन्य देवाश्रय नाइ
तोमारे कहिनु भाइ
एइ भक्ति परम-कारण

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का दृढ़ एकनिष्ठ और शुद्ध भक्त बनने (*अनन्यभाक्*) के लिए अपने चित्त को देवताओं की पूजा में लगाकर विचलित नहीं करना चाहिए। ऐसा नियन्त्रण शुद्ध भक्ति का लक्षण है।"

आपनि चन्दन परि' परेन फूल-माला ।
नैवेद्य काड़िया खा'न—सन्देश, चाल, कला ॥५१॥

आपनि चन्दन परि' परेन फुल-माला ।
नैवेद्य काड़िया खा'न—सन्देश, चाल, कला ॥५१॥

आपनि—स्वयं; **चन्दन**—चन्दन; **परि'**—शरीर पर लगाकर; **परेन**—पहन लेते; **फुल-माला**—पुष्प मालाएँ; **नैवेद्य**—भोग सामग्री; **काड़िया**—छीनकर; **खा'न**—खाने लग जाते; **सन्देश**—सन्देश; **चाल**—चावल; **कला**—केला।

अनुवाद

महाप्रभु कन्याओं की अनुमति के बिना ही चन्दन निकाल लेते और अपने शरीर में लगा लेते, उनकी फूल-मालाओं को अपने गले में पहन लेते और मिठाइयाँ, चावल तथा केलों की भेंट को छीनकर स्वयं खा जाते।

तात्पर्य

अर्चन-विधि के अनुसार जब घर के बाहर अर्चाविग्रहों को कुछ अर्पित किया जाता है, तो सामान्यतया पका भोजन नहीं, अपितु कच्चा चावल, केला तथा मिठाइयाँ चढ़ाई जाती हैं। महाप्रभु अहैतुकी कृपावश भेंट की सारी वस्तुएँ लड़कियों से छीनकर स्वयं खा जाते और उनको देवताओं की पूजा न करने और अपनी पूजा करने के लिए डाँटते। श्री चैतन्य महाप्रभु की यह पूजा *श्रीमद्भागवत* द्वारा संस्तुत की गई है (११.५.३२) :

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्र पार्षदम्।
यज्ञैः सङ्कीर्तन-प्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः॥

"मनुष्य को पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् की पूजा करनी चाहिए, जो कलियुग में पंचतत्त्व रूप में अपने पार्षदों के साथ प्रकट होते हैं—ये हैं स्वयं महाप्रभु तथा उनके पार्षद नित्यानन्द प्रभु, श्री अद्वैत प्रभु, श्री गदाधर प्रभु तथा श्रीवास ठाकुर। इस युग में बुद्धिमान लोग पंचतत्त्व की पूजा हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करके और यदि सम्भव हुआ तो प्रसाद वितरण से करते हैं।" हमारा कृष्णभावनामृत आन्दोलन पूजा की इस प्रामाणिक विधि को पाश्चात्य जगत् में चला रहा है। इसके सदस्य चैतन्य महाप्रभु के अर्चाविग्रह लेकर गाँव-गाँव तथा नगर-नगर घूमते हैं और लोगों को बतलाते हैं कि किस तरह हरे कृष्ण मन्त्र का कीर्तन करके, प्रसाद चढ़ाकर और लोगों में उसका वितरण करके महाप्रभु की पूजा करनी चाहिए।

ক্রোধে কন্যাগণ কহে—শুন, হে নিমাঞি ।
গ্রাম-সম্বন্ধে হও তুমি আমা সবার ভাই ॥৫২॥

क्रोधे कन्यागण कहे—शुन, हे निमाञि ।
ग्राम-सम्बन्धे हओ तुमि आमा सबार भाइ ॥५२॥

क्रोधे—क्रोध में; **कन्या-गण**—सभी कन्याएँ; **कहे**—कहतीं; **शुन**—सुनो; **हे**—उसे; **निमाञि**—निमाइ; **ग्राम**—ग्राम; **सम्बन्धे**—सम्बन्ध में; **हओ**—हो; **तुमि**—तुम; **आमा**—हम; **सबार**—सबके; **भाइ**—भाई।

अनुवाद

महाप्रभु के इस व्यवहार से सारी कन्याएँ अत्यन्त क्रुद्ध हो गईं। उन्होंने कहा, "अरे निमाइ, तुम गाँव के रिश्ते से हमारे भाई जैसे हो।

আমা সবাকার পক্ষে ইহা করিতে না যুয়ায় ।
না লহ দেবতা সজ্জ, না কর অন্যায় ॥৫৩॥

आमा सबाकार पक्षे इहा करिते ना युयाय ।
ना लह देवता सज्ज, ना कर अन्याय ॥५३॥

आमा सबाकार—हम सबकी; **पक्षे**—ओर से; **इहा**—यह; **करिते**—करने के लिए; **ना**—नहीं; **य्रुयाय**—योग्य है; **ना**—नहीं; **लह**—लेना; **देवता**—देवता; **सज्ज**—पूजा की सामग्री; **ना**—नहीं; **कर**—करो; **अन्याय**—शरारत।

अनुवाद

"अतएव ऐसा करना तुम्हें शोभा नहीं देता। तुम हमारी देव-पूजन की सामग्री मत लो। तुम इस तरह उपद्रव न मचाओ।"

प्रभु कहे,—"तोमा सवाके दिल एइ वर ।
तोमा सवार भर्ता हवे परम सुन्दर ॥५४॥

प्रभु कहे,—"तोमा सबाके दिल एइ वर ।
तोमा सबार भर्ता हबे परम सुन्दर ॥५४॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **तोमा**—तुम; **सबाके**—सबको; **दिल**—मैं देता हूँ; **एइ**—यह; **वर**—वरदान; **तोमा सबार**—तुम सबके; **भर्ता**—पति; **हबे**—होंगे; **परम**—बहुत; **सुन्दर**—सुन्दर।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "मेरी प्रिय बहनों, मैं तुम्हें वर देता हूँ कि तुम सबको अत्यन्त सुन्दर पति मिलेंगे।

पण्डित, विदग्ध, युवा, धन-धान्यवान् ।
सात सात पुत्र हवे—चिरायु, मतिमान्" ॥५५॥

पण्डित, विदग्ध, य्रुवा, धन-धान्यवान् ।
सात सात पुत्र हबे—चिरायु, मतिमान्" ॥५५॥

पण्डित—विद्वान; **विदग्ध**—दक्ष एवं हास्य-प्रेमी; **य्रुवा**—युवा; **धन-धान्यवान्**—धन-धान्य से युक्त; **सात सात**—सात सात; **पुत्र**—पुत्र; **हबे**—तुम्हारे होंगे; **चिरायु**—लम्बी आयु वाले; **मतिमान्**—और बुद्धिमान।

अनुवाद

"वे विद्वान, चतुर तथा तरुण होंगे और धन-धान्य से परिपूर्ण होंगे। इतना ही नहीं, बल्कि तुम सबके सात-सात बेटे होंगे, जो लम्बी आयु वाले तथा अत्यन्त बुद्धिमान होंगे।"

तात्पर्य

सामान्यतया हर तरुणी चाहती है कि उसे सुन्दर पति मिले, जो विद्वान, चतुर, तरुण तथा धनी हो। वैदिक संस्कृति के अनुसार धनी वह है, जिसके पास प्रचुर अन्न का भण्डार तथा पशुओं का समूह हो। *धान्येन धनवान् गवया धनवान्*—जिसके पास अन्न, गाएँ तथा बैल होते हैं, वही धनी है। तरुणी यह भी चाहती है कि उसके बहुत से बच्चे हों, विशेषतया पुत्र हों जो बुद्धिमान तथा दीर्घजीवी हों। किन्तु समाज के पतन के कारण अब तो ऐसा प्रचार हो रहा है कि एक या दो बच्चे काफी हैं और शेष को निरोध-उपायों से मार दिया जाए। किन्तु तरुणी की सहज इच्छा यही होती है कि उसके एक से अधिक ही नहीं, अपितु कम-से-कम आधे दर्जन बच्चे हों।

चैतन्य महाप्रभु पूजा की जो सामग्री अपने लिए छीन लेते थे, उसके बदले में वे उन कन्याओं की इच्छाओं को पूरा करने के लिए वर देना चाहते थे। चैतन्य महाप्रभु की पूजा करके मनुष्य सुखी बन सकता है और अच्छा पति, धन, अन्न तथा अनेक सन्तानें पाकर भौतिक लाभ प्राप्त कर सकता है। यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु ने कम उम्र में ही संन्यास ले लिया था, किन्तु उनके भक्तों के लिए भी संन्यास लेकर उनका अनुसरण करना आवश्यक नहीं है। मनुष्य गृहस्थ बन सकता है, किन्तु उसे चैतन्य महाप्रभु का भक्त अवश्य बनना चाहिए। तभी वह सुखी होगा और उसे अच्छा घर, अच्छी सन्तान, अच्छी पत्नी, अच्छी सम्पत्ति तथा सारी मनोवांछित वस्तुएँ प्राप्त हो सकती हैं। इसीलिए शास्त्रों का उपदेश है—*यज्ञैः सङ्कीर्तन प्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः* (*भागवत* ११.५.३२)। अतएव प्रत्येक बुद्धिमान गृहस्थ को घर-घर में संकीर्तन आन्दोलन शुरू करना चाहिए और इस जीवन में शान्तिपूर्वक रहकर अगले जीवन में भगवद्धाम जाना चाहिए।

বর শুনি' কন্যা-গণের অন্তরে সন্তোষ ।
বাহিরে ভৎর্সন করে করি' মিথ্যা রোষ ॥৫৬॥

वर शुनि' कन्या-गणेर अन्तरे सन्तोष ।
बाहिरे भर्त्सन करे करि' मिथ्या रोष ॥५६॥

वर शुनि'—वरदान सुनकर; **कन्या-गणेर**—कन्याएँ; **अन्तरे**—मन ही मन; **सन्तोष**—अत्यन्त सन्तुष्ट; **बाहिरे**—बाहर से; **भर्त्सन**—झिड़कती हुईं; **करे**—वे करती हैं; **करि'**—करके; **मिथ्या**—झूठा; **रोष**—क्रोध।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा दिया गया यह वर सुनकर सारी कन्याएँ मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न थीं, किन्तु ऊपर से, जैसाकि कन्याओं के लिए स्वाभाविक है, क्रुद्ध होने का बहाना बनाकर उन्हें डाँटने लगीं।

तात्पर्य

ऐसा दोहरा व्यवहार लड़कियों में स्वाभाविक है। जब वे अन्तःकरण से प्रसन्न होती हैं, तब वे बाहर से असन्तोष व्यक्त करती हैं। स्त्रियों का ऐसा व्यवहार उन लड़कों को बहुत भाता है, जो उनसे मैत्री करना चाहते हैं।

कोन कन्या पलाइल नैवेद्य लइया ।
तारे डाकि' कहे प्रभु सक्रोध हइया ॥५७॥

कोन कन्या पलाइल नैवेद्य लइया ।
तारे डाकि' कहे प्रभु सक्रोध हइया ॥५७॥

कोन कन्या—कुछ कन्याएँ; **पलाइल**—भाग गईं; **नैवेद्य**—नैवेद्य की थाली; **लइया**—लेकर; **तारे**—उनको; **डाकि'**—बुलाते हुए; **कहे**—कहते; **प्रभु**—महाप्रभु; **सक्रोध**—क्रुद्ध; **हइया**—होकर।

अनुवाद

जब कुछ कन्याएँ नैवेद्य लेकर भाग गईं, तो महाप्रभु ने क्रुद्ध होकर उन्हें बुलाया और इस तरह कहा।

यदि नैवेद्य ना देह हइया कृपणी ।
बूड़ा भर्ता हबे, आर चारि चारि सतिनी ॥५८॥

यदि नैवेद्य ना देह हइया कृपणी ।
बुड़ा भर्ता हबे, आर चारि चारि सतिनी ॥५८॥

यदि—यदि; **नैवेद्य**—नैवेद्य; **ना**—न; **देह**—मुझे दिया; **हइया**—होकर; **कृपणी**—कंजूस; **बुड़ा**—बूढ़ा; **भर्ता**—पति; **हबे**—मिलेगा; **आर**—और; **चारि**—चार; **चारि**—चार; **सतिनी**—सौतनें।

अनुवाद

"यदि तुम कंजूसी करोगी और मुझे भेंट नहीं चढ़ाओगी, तो तुम में से हर एक को बूढ़ा पति और कम से कम चार चार सौतनें मिलेंगी।"

तात्पर्य

भारत में उन दिनों और यहाँ तक कि ५० वर्ष पूर्व तक बहुविवाह के लिए स्वतन्त्रता थी। कोई भी व्यक्ति, विशेषतया उच्च जाति के ब्राह्मण, वैश्य तथा विशेषकर क्षत्रिय एक से अधिक पत्नियाँ रख सकते थे। महाभारत काल में या भारत के प्राचीन इतिहास में हमें देखने को मिलता है कि क्षत्रिय राजाओं के कई विवाह होते थे। वैदिक सभ्यता के अनुसार इस पर कोई प्रतिबन्ध न था और पचास वर्ष की उम्र का व्यक्ति भी विवाह कर सकता था। किन्तु ऐसे व्यक्ति से विवाहित होना, जिसकी कई पत्नियाँ हों, कभी भी अच्छा नहीं माना जाता था, क्योंकि इससे पति का प्यार कई पत्नियों में बँट जाता है। चैतन्य महाप्रभु इन कन्याओं को, कम से कम चार पत्नियों वाले पति से ब्याह होने का शाप देने का दिखावा करके इसीलिए दण्डित कर रहे थे, क्योंकि वे उन्हें नैवेद्य नहीं देना चाहती थीं। सामाजिक ढाँचे में पुरुष को एक से अधिक ब्याह करने की छूट दिये जाने का समर्थन इस प्रकार से किया जा सकता है। सामान्यतया हर समाज में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक होती है। अतएव यदि समाज का यह सिद्धान्त रहे कि सारी कन्याएँ विवाहित हों, तो जब तक बहुपत्नीत्व की अनुमति न मिले, ऐसा सम्भव नहीं होगा। यदि सारी कन्याओं का विवाह नहीं होता, तो व्यभिचार की अधिक आशंका बनी रहती है और व्यभिचार वाला समाज कभी शुद्ध या शान्त नहीं रह सकता। हमने अपने कृष्णभावनामृत आन्दोलन में अवैध यौन-जीवन पर प्रतिबन्ध लगा रखा है। व्यावहारिक कठिनाई यह है कि हर कन्या के लिए पति ढूँढ पाना कठिन है। अतएव हम बहुपत्नीत्व के पक्ष में हैं, बशर्ते कि पति एक से अधिक पत्नियों का भरण-पोषण कर सकने में समर्थ हो।

ইহা শুনি' তা-সবার মনে হইল ভয় ।
কোন কিছু জানে, কিবা দেবাবিষ্ট হয় ॥৫৯॥

इहा शुनि' ता-सबार मने हइल भय ।
कोन किछु जाने, किबा देवाविष्ट हय ॥५९॥

इहा शुनि'—यह सुनकर; **ता-सबार**—सभी कन्याओं के; **मने**—मनों में; **हइल**—हो गया; **भय**—भय; **कोन किछु**—कुछ असामान्य; **जाने**—वे जानते हैं; **किबा**—क्या; **देव-आविष्ट**—देवताओं से शक्ति प्रदत्त; **हय**—वे हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य का यह कल्पित शाप सुनकर कन्याओं ने सोचा कि हो सकता है यह कुछ असाधारण बातें जानता हो या इसे देवताओं से शक्ति प्राप्त हो, अतः वे भयभीत हो गई थीं कि उसका शाप कहीं सच न हो जाए।

আনিয়া নৈবেদ্য তারা সম্মুখে ধরিল ।
খাইয়া নৈবেদ্য তারে ইষ্ট-বর দিল ॥৬০॥

आनिया नैवेद्य तारा सम्मुखे धरिल ।
खाइया नैवेद्य तारे इष्ट-वर दिल ॥६०॥

आनिया—लाकर; **नैवेद्य**—नैवेद्य; **तारा**—वे सब; **सम्मुखे**—सामने; **धरिल**—रख दिया; **खाइया**—खाया; **नैवेद्य**—नैवेद्य; **तारे**—उनको; **इष्ट-वर**—अभीष्ट वरदान; **दिल**—दिया।

अनुवाद

तब कन्याएँ महाप्रभु के समक्ष अपनी अपनी भेंटें ले आईं और महाप्रभु ने उन्हें खाकर कन्याओं को मनोवांछित आशीर्वाद दिया।

এই মত চাপল্য সব লোকেরে দেখায় ।
দুঃখ কারো মনে নহে, সবে সুখ পায় ॥৬১॥

एइ मत चापल्य सब लोकेरे देखाय ।
दुःख कारो मने नहे, सबे सुख पाय ॥६१॥

एइ मत—इस प्रकार; **चापल्य**—चपल व्यवहार; **सब लोकेरे**—सामान्य लोगों को;

देखाय—दिखाते हैं; **दुःख**—दुःख; **कारो**—कष्ट; **मने**—मन में; **नहे**—ऐसी कोई बात नहीं है; **सबे**—प्रत्येक; **सुख**—सुख; **पाय**—पाता है।

अनुवाद

जब लोगों को कन्याओं के प्रति महाप्रभु की इस चातुरी का पता लगा, तो उनमें किसी तरह की गलतफहमी नहीं हुई। बल्कि उन्हें इन व्यवहारों से आनन्द प्राप्त हुआ।

एक-दिन वल्लभाचार्य-कन्या 'लक्ष्मी' नाम ।
देवता पूजिते आइल करि गङ्गा-स्नान ॥ ६२॥

एक-दिन वल्लभाचार्य-कन्या 'लक्ष्मी' नाम ।
देवता पूजिते आइल करि गङ्गा-स्नान ॥ ६२॥

एक-दिन—एक दिन; **वल्लभाचार्य-कन्या**—वल्लभाचार्य की पुत्री; **लक्ष्मी**—लक्ष्मी; **नाम**—नामक; **देवता**—देवता; **पूजिते**—पूजा करने के लिए; **आइल**—आई; **करि**—लेकर; **गङ्गा-स्नान**—गंगा स्नान।

अनुवाद

एक दिन वल्लभाचार्य की पुत्री, जिसका नाम लक्ष्मी था, गंगा किनारे नदी में स्नान करने और देवताओं को पूजने आई।

तात्पर्य

गौरगणोद्देश-दीपिका (४५) के अनुसार लक्ष्मी पूर्वजन्म में भगवान् रामचन्द्र की पत्नी जानकी और द्वारका में भगवान् कृष्ण की पत्नी रुक्मिणी थी। वही लक्ष्मी के रूप में चैतन्य महाप्रभु की पत्नी बनने के लिए अवतरित हुईं।

তাঁরে দেখি' প্রভুর হইল সাভিলাষ মন ।
লক্ষ্মী চিত্তে প্রীত পাইল প্রভুর দর্শন ॥ ৬৩॥

তাঁরে দেখি' প্রভুর হইল সাভিলাষ মন ।
লক্ষ্মী চিত্তে প্রীত পাইল প্রভুর দর্শন ॥ ৬৩॥

তাঁরে দেখি'—उसे देखकर; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **हइल**—था; **स**—उसकी; **अभिलाष**—आसक्ति; **मन**—मन; **लक्ष्मी**—लक्ष्मी भी; **चित्ते**—हृदय में; **प्रीत**—सन्तोष; **पाइल**—पाया; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **दर्शन**—दर्शन।

अनुवाद

लक्ष्मीदेवी को देखकर महाप्रभु उनके प्रति अनुरक्त हो गये और महाप्रभु को देखकर लक्ष्मी को अपने मन में परम सन्तोष की अनुभूति हुई।

सहजिक प्रीति दुँहार करिल उदय ।
बाल्य-भावाच्छन्न तभु हइल निश्चय ॥ ६४॥

साहजिक प्रीति दुँहार करिल उदय ।
बाल्य-भावाच्छन्न तभु हइल निश्चय ॥ ६४॥

साहजिक—सहज; **प्रीति**—प्रेम; **दुँहार**—दोनों; **करिल**—किया; **उदय**—प्रकट; **बाल्य**—बाल्यावस्था; **भाव-आच्छन्न**—भाव से आच्छदन; **तभु**—फिर भी; **हइल**—ऐसा हो गया; **निश्चय**—निश्चय।

अनुवाद

उन में परस्पर सहज प्रेम जाग्रत हुआ और बाल्यकाल की भावनाओं से प्रच्छन्न होने पर भी यह प्रकट हो गया कि वे दोनों एक दूसरे पर स्वाभाविक रूप से अनुरक्त हैं।

तात्पर्य

चैतन्य महाप्रभु तथा लक्ष्मीदेवी सनातन पति-पत्नी हैं। अतएव जब दोनों ने एक दूसरे को देखा, तो उनमें सुप्त प्रेम का जाग्रत होना स्वाभाविक था। उनके मिलन से उनकी स्वाभाविक भावनाएँ तुरन्त जाग उठीं।

दुँहा देखि' दुँहार चित्ते हइल उल्लास ।
देव-पूजा छले कैल दुँहे परकाश ॥ ६५॥

दुँहा देखि' दुँहार चित्ते हइल उल्लास ।
देव-पूजा छले कैल दुँहे परकाश ॥ ६५॥

दुँहा—वे दोनों; **देखि'**—देखकर; **दुँहार**—दोनों के; **चित्ते**—मन में; **हइल**—था; **उल्लास**—हर्ष; **देव-पूजा**—देवताओं की पूजा करके; **छले**—इस बहाने से; **कैल**—था; **दुँहे**—वे दोनों; **परकाश**—प्रकट।

अनुवाद

उन दोनों ने एक दूसरे को निहारने के नैसर्गिक आनन्द का आस्वादन किया और देव-पूजा के बहाने दोनों ने अपनी भावनाएँ प्रकट कीं।

प्रभु कहे, 'आमा' पूज, आमि महेश्वर ।
आमारे पूजिले पाबे अभीप्सित बर' ॥६६॥

प्रभु कहे, 'आमा' पूज, आमि महेश्वर ।
आमारे पूजिले पाबे अभीप्सित वर' ॥ ६६ ॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **आमा' पूज**—मेरी पूजा करो; **आमि**—मैं हूँ; **महेश्वर**—परम भगवान्; **आमारे**—मुझे; **पूजिले**—यदि तुम पूजा करोगी; **पाबे**—तुम पाओगी; **अभीप्सित**—अभीष्ट; **वर**—वरदान।

अनुवाद

महाप्रभु ने लक्ष्मी से कहा, "मेरी पूजा करो, क्योंकि मैं परमेश्वर हूँ। यदि तुम मेरी पूजा करोगी, तो निश्चय ही तुम्हें मनोवांछित वर प्राप्त होगा।"

तात्पर्य

यही सिद्धान्त स्वयं भगवान् कृष्ण घोषित करते हैं :

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।

"सारे धर्मों को छोड़कर मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हें सारे पापों से मुक्त कर दूँगा। तुम डरो मत।" (*भगवद्गीता* १८.६६) लोग इसे समझते नहीं। वे अनेक देवताओं, मनुष्यों, यहाँ तक कि कुत्तों-बिल्लियों की प्रशंसा करते रहते हैं, या उन्हें पूजते हैं, किन्तु जब उनसे भगवान् की पूजा करने को कहा जाता है, तो वे मना कर देते हैं। यही माया है। वास्तव में, यदि कोई भगवान् की पूजा करता है, तो उसे अन्य किसी की पूजा करने की आवश्यकता नहीं रहती। उदाहरणार्थ, गाँव के सीमित क्षेत्र में विभिन्न कुओं का उपयोग विभिन्न कार्यों के लिए किया जा सकता है, किन्तु जब कोई नदी के पास जाता है, तब नदी में तरंगों के रूप में निरन्तर बहने के कारण इसका पानी सारे कार्यों में प्रयुक्त किया जा सकता है। जहाँ नदी होती है, वहाँ पीने का पानी उसी से लिया जा सकता है, उसी

से कपड़े धोये जा सकते हैं, नहाया जा सकता है इत्यादि, क्योंकि यह पानी सभी कामों में प्रयुक्त किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि कोई पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की पूजा करता है, तो उसके सारे लक्ष्य पूरे हो जायेंगे। *कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्य देवताः*—केवल वही लोग अपनी इच्छापूर्ति के लिए विविध देवताओं को पूजते हैं, जिनकी बुद्धि मारी गई है (*भगवद्गीता* ७.२०)।

लक्ष्मी तांर अङ्गे दिल पुष्प-चन्दन ।
मल्लिकार माला दिया करिल वन्दन ॥ ६७॥

लक्ष्मी ताँर अङ्गे दिल पुष्प-चन्दन ।
मल्लिकार माला दिया करिल वन्दन ॥ ६७॥

लक्ष्मी—लक्ष्मी देवी; **ताँर**—उनके; **अङ्गे**—शरीर पर; **दिल**—दिया; **पुष्प**—पुष्प; **चन्दन**—चन्दन; **मल्लिकार**—मल्लिका के पुष्प; **माला**—माला; **दिया**—देकर; **करिल**—की; **वन्दन**—वन्दना।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का आदेश सुनकर लक्ष्मी ने तुरन्त उनकी पूजा की—उनके शरीर पर चन्दन तथा फूल चढ़ाये, उन्हें मल्लिका फूलों की माला पहनाई और उनकी स्तुति की।

प्रभु तांर पूजा पाञा हासिते लागिला ।
श्लोक पड़ि' तांर भाव अङ्गीकार कैला ॥ ६८॥

प्रभु ताँर पूजा पाञा हासिते लागिला ।
श्लोक पड़ि' ताँर भाव अङ्गीकार कैला ॥ ६८॥

प्रभु—महाप्रभु; **ताँर**—उसकी; **पूजा**—पूजा; **पाञा**—पाकर; **हासिते**—हँसने; **लागिला**—लगे; **श्लोक पड़ि'**—एक श्लोक पढ़कर; **ताँर**—उसका; **भाव**—भाव; **अङ्गीकार कैला**—स्वीकार किया।

अनुवाद

लक्ष्मी द्वारा इस प्रकार पूजे जाने पर महाप्रभु मुस्काने लगे। उन्होंने

श्रीमद्भागवत का एक श्लोक कहा और लक्ष्मी द्वारा व्यक्त मनोभाव को स्वीकार कर लिया।

तात्पर्य

इस प्रसंग में जिस श्लोक को उद्धृत किया गया है, वह *श्रीमद्भागवत* के दसवें स्कंध के बाइसवें अध्याय का पच्चीसवाँ श्लोक है। यद्यपि गोपियाँ दुर्गादेवी या कात्यायनी की पूजा करती थीं, किन्तु उनकी आन्तरिक इच्छा भगवान् कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने की थी। परमात्मा होने के कारण कृष्ण गोपियों की उत्कट इच्छा को जान गये, अतएव उन्होंने *वस्त्रहरण-लीला* का रसास्वादन किया। गोपियाँ किनारे पर अपने अपने वस्त्र छोड़कर पूर्णतया नग्न होकर यमुना में स्नान करने गईं। कृष्ण ने अवसर पाकर उनके वस्त्र चुरा लिये और उन्हें लेकर पेड़ पर चढ़ गये, वे उनके पति की तरह बनकर गोपिकाओं को नग्न देख सकें। गोपियाँ चाहती थीं कि कृष्ण उनके पति हों और चूँकि कोई भी स्त्री अपने पति के ही आगे नग्न हो सकती है, अतएव कृष्ण ने उनकी इच्छा पूरी करने के लिए वस्त्रहरण-लीला करके गोपियों की याचना को स्वीकार किया। जब गोपियों को उनके वस्त्र मिल गये, तो कृष्ण ने यह श्लोक पढ़ा था।

सङ्कल्पो विदितः साध्व्यो भवतीनाः मदर्चनम् ।
मयानुमोदितः सोऽसौ सत्यो भवितुमर्हति ॥ ६९॥

सङ्कल्पः—इच्छा; **विदितः**—जान ली गई; **साध्व्यः**—उन सब पवित्र महिलाओं की; **भवतीनाम्**—तुम सबका; **मत्-अर्चनम्**—मेरी पूजा के लिए; **मया**—मुझसे; **अनुमोदितः**—स्वीकार; **सः**—वह; **असौ**—वह इच्छा अथवा संकल्प; **सत्यः**—सफल; **भवितुम्**—होने हेतु; **अर्हति**—योग्य है।

अनुवाद

"हे प्रिय गोपियों, मैं तुम्हारा पति बनने तथा इस प्रकार से मेरी पूजा करने की तुम लोगों की इच्छा को स्वीकार करता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम लोगों की इच्छा पूरी हो, क्योंकि यह पूरी होने योग्य है।"

तात्पर्य

कृष्ण की संगिनी गोपियाँ लगभग कृष्ण के ही समान आयु की थीं। उन्होंने मन में चाहा था कि कृष्ण उनके पति बनें, किन्तु स्त्री-सुलभ लज्जा के कारण वे अपनी इच्छा व्यक्त नहीं कर सकती थीं। अतएव उनके वस्त्रहरण के बाद कृष्ण ने उन्हें बतलाया, "मैं तुरन्त ही तुम लोगों की कामना को समझ गया और मैंने उसे मान भी लिया। चूँकि मैंने तुम लोगों के वस्त्र चुरा लिए हैं और तुम लोग मेरे सामने बिल्कुल नग्न रूप में उपस्थित हो, इसका अर्थ यही होता है कि मैंने तुम सबको पत्नी-रूप में स्वीकार कर लिया है।" कभी-कभी भगवान् का या गोपियों का अभिप्राय न जानने के कारण मति-भ्रष्ट लोग अपने दृष्टिकोण से व्यर्थ ही आलोचना करते हैं, किन्तु वस्त्रहरण के असली आशय को इस श्लोक में भगवान् ने बतलाया है।

এই-মত লীলা করি' দুঁহে গেলা ঘরে ।
গম্ভীর চৈতন্য-লীলা কে বুঝিতে পারে ॥৭০॥

এइ-মত লীলা করি' দুঁহে গেলা ঘরে ।
গম্ভীর চৈতন্য-লীলা কে বুঝিতে পারে ॥৭০॥

এइ-মত—इस प्रकार; **লীলা**—लीलाएँ; **করি'**—करके; **দুঁহে**—वे दोनों; **গেলা**—लौट गये; **ঘরে**—घर; **গম্ভীর**—बहुत गम्भीर भाव में; **চৈতন্য-লীলা**—चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ; **কে**—कौन; **বুঝিতে**—समझने में; **পারে**—सक्षम।

अनुवाद

इस तरह परस्पर अपने-अपने भावों को व्यक्त करने के बाद भगवान् चैतन्य तथा लक्ष्मी दोनों अपने-अपने घर लौट गये। भला चैतन्य महाप्रभु की गम्भीर लीलाओं को कौन समझ सकता है?

চৈতন্য-চাপল্য দেখি' প্রেমে সর্ব জন ।
শচী-জগন্নাথে দেখি' দেন ওলাহন ॥৭১॥

চৈতন্য-চাপল্য দেখি' প্রেমে সর্ব জন ।
শচী-জগন্নাথে দেখি' দেন ওলাহন ॥৭১॥

चैतन्य—भगवान् चैतन्य; **चापल्य**—शरारतीपन; **देखि'**—देखकर; **प्रेमे**—प्रेम के कारण; **सर्व जन**—सभी लोग; **शची**—शचीमाता के सम्मुख; **जगन्नाथे**—और जगन्नाथ मिश्र; **देखि'**—उनको देखकर; **देन**—दिया; **ओलाहन**—उलाहना।

अनुवाद

पास पड़ोस के लोगों ने जब चैतन्य महाप्रभु के नटखट स्वभाव को देखा, तो उन्होंने प्रेमवश शचीमाता तथा जगन्नाथ मिश्र से शिकायत की।

একদিন শচী-দেবী পুত্রেরে ভৎর্সিয়া ।
ধরিবারে গেলা, পুত্র গেলা পলাইয়া ॥৭২॥

একদিন শচী-দেবী পুত্রেরে ভর্ৎসিয়া ।
ধরিবারে গেলা, পুত্র গেলা পলাইয়া ॥ ৭২ ॥

এক-দিন—एक दिन; **শচী-দেবী**—माता शचीदेवी; **পুত্রেরে**—पुत्र को; **ভর্ৎসিয়া**—डाँटने के लिए; **ধরিবারে**—उनको पकड़ने के लिए; **গেলা**—गईं; **পুত্র**—पुत्र; **গেলা**—गये; **পলাইয়া**—भागकर।

अनुवाद

एक दिन शचीमाता अपने पुत्र को डाँटने के उद्देश्य से उसे पकड़ने गईं, किन्तु वे उस स्थान से भाग निकले।

উচ্ছিষ্ট-গর্তে ত্যক্ত-হাণ্ডীর উপর ।
বসিয়াছেন সুখে প্রভু দেব-বিশ্বম্ভর ॥৭৩॥

উচ্ছিষ্ট-গর্তে ত্যক্ত-হাণ্ডীর উপর ।
বসিয়াছেন সুখে প্রভু দেব-বিশ্বম্ভর ॥ ৭৩ ॥

উচ্ছিষ্ট-গর্তে—गड्ढे में जहाँ बचा हुआ भोजन फेंका हुआ था; **ত্যক্ত**—फेंके हुए; **হাণ্ডীর**—बर्तन; **উপর**—ऊपर; **বসিয়াছেন**—बैठ गये; **সুখে**—बड़े आराम से; **প্রভু**—महाप्रभु; **দেব**—परम भगवान्; **বিশ্বম্ভর**—ब्रह्माण्ड के पालनहार।

अनुवाद

यद्यपि चैतन्य महाप्रभु सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के पालनकर्ता हैं, किन्तु एक बार वे उस गड्ढे में भोजन पकाने के बाद फेंके गये पात्रों के ऊपर जाकर बैठ गये, जहाँ जूठन फेंका जाता है।

तात्पर्य

पहले ब्राह्मणों द्वारा घर पर प्रतिदिन भगवान् विष्णु की पूजा करने और नये पात्रों में भोजन पकाने की प्रथा थी। यह प्रथा आज भी जगन्नाथ पुरी में प्रचलित है। वहाँ मिट्टी की ताजी नई हाँड़ी में भोजन पकाया जाता है और पकाने के बाद इन हाँड़ियों को फेंक दिया जाता है। सामान्यतया घरों के पास एक बड़ा गड्ढा होता था, जहाँ ऐसी हाँड़ियाँ फेंकी जाती थी। श्री चैतन्य महाप्रभु ऐसी ही हाँड़ी के ऊपर मजे से बैठ गये, क्योंकि वे अपनी माता को शिक्षा देना चाह रहे थे।

शची आसि' कहे,—केने अशुचि छुँइला ।
गङ्गा-स्नान कर याइ'—अपवित्र इइला ॥७४॥

शची आसि' कहे,—केने अशुचि छुडिला ।
गङ्गा-स्नान कर याइ'—अपवित्र हइला ॥७४॥

शची आसि'—माता शची ने वहाँ आकर; **कहे**—कहा; **केने**—क्यों; **अशुचि**—अस्पर्श्य; **छुडिला**—तुमने छुआ है; **गङ्गा-स्नान**—गंगा स्नान; **कर**—करो; **याइ'**—वहाँ जाकर; **अपवित्र हइला**—तुम अपवित्र हो गये हो।

अनुवाद

जब शचीमाता ने अपने बेटे को फेंकी हुई हाँड़ियों के ऊपर बैठे देखा, तो उन्होंने यह कहकर आपत्ति प्रकट की, "तुमने इन अशुद्ध बर्तनों को क्यों छुआ? अब तुम अशुद्ध हो गये हो। जाओ और गंगा में स्नान करो।"

इहा शुनि' माताके कहिल ब्रह्म-ज्ञान ।
विस्मिता इइया माता कराइल स्नान ॥७५॥

इहा शुनि' माताके कहिल ब्रह्म-ज्ञान ।
विस्मिता हइया माता कराइल स्नान ॥७५॥

इहा शुनि'—यह सुनकर; **माताके**—अपनी माता को; **कहिल**—बताया; **ब्रह्म-ज्ञान**—ब्रह्म ज्ञान; **विस्मिता**—हैरान; **हइया**—होकर; **माता**—माता; **कराइल**—करवाया; **स्नान**—स्नान।

अनुवाद

यह सुनकर चैतन्य महाप्रभु ने अपनी माता को ब्रह्म-ज्ञान की शिक्षा दी। यद्यपि वे इससे विस्मित तो हुईं, किन्तु फिर भी उन्होंने महाप्रभु को स्नान करने के लिए बाध्य किया।

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में महाप्रभु द्वारा अपनी माता से कहे गये ब्रह्म-ज्ञान की व्याख्या इस प्रकार की है, "महाप्रभु ने कहा, 'हे माता, यह शुद्ध है और वह अशुद्ध है—यह तो आधारहीन सांसारिक भावना है। आपने इन बर्तनों में भगवान् विष्णु के लिए भोजन पकाया है और वही भोजन उन्हें समर्पित किया है। तो फिर ये बर्तन अशुद्ध क्यों हुए? विष्णु से सम्बन्धित हर वस्तु को विष्णु की शक्ति का अंश माना जाना चाहिए। विष्णु परमात्मा हैं, शाश्वत हैं और अकलुषित हैं। तो फिर इन बर्तनों को किस तरह शुद्ध या अशुद्ध माना जा सकता है?" ब्रह्म-ज्ञान विषयक यह बातें सुनकर उनकी माता अत्यन्त चकित हुईं और उन्हें स्नान करने के लिए बाध्य किया।"

कभु पुत्र-सङ्गे शची करिला शयन ।
देखे, दिव्यलोक आसि' भरिल भवन ॥७६॥
कभु पुत्र-सङ्गे शची करिला शयन ।
देखे, दिव्यलोक आसि' भरिल भवन ॥७६॥

कभु—कभी-कभी; **पुत्र-सङ्गे**—पुत्र को लेकर; **शची**—माता शची; **करिला शयन**—विश्राम करती; **देखे**—देखती; **दिव्य-लोक**—दिव्य लोगों को; **आसि'**—वहाँ आकर; **भरिल**—भरा हुआ; **भवन**—सारा घर।

अनुवाद

कभी-कभी शचीमाता अपने पुत्र को लेकर बिस्तर पर लेटतीं और वे देखतीं कि स्वर्गलोक के निवासी वहाँ आये हुए हैं, जिनसे सारा घर भर गया है।

शची बले,—याह, पुत्र, बोलाह बापेरे ।
मातृ-आज्ञा पाइया प्रभु चलिला बाहिरे ॥७७॥

शची बले,—ग्राह, पुत्र, बोलाह बापेरे ।
मातृ-आज्ञा पाइया प्रभु चलिला बाहिरे ॥ ७७ ॥

शची बले—माता शची ने कहा; **ग्राह**—जाओ; **पुत्र**—मेरे प्रिय पुत्र; **बोलाह**—बुलाओ; **बापेरे**—अपने पिता को; **मातृ-आज्ञा**—अपनी माता की आज्ञा; **पाइया**—पाकर; **प्रभु**—महाप्रभु; **चलिला**—चले गये; **बाहिरे**—बाहर।

अनुवाद

एक बार शचीमाता ने महाप्रभु से कहा, "जाकर अपने पिता को बुला लाओ।" माता का आदेश पाकर वे उन्हें बुलाने बाहर गये।

চলিতে চরণে নূপুর বাজে ঝন্ঝন্ ।
শুনি' চমকিত হৈল পিতা-মাতার মন ॥৭৮॥

चलिते चरणे नूपुर बाजे झन्झन् ।
शुनि' चमकित हैल पिता-मातार मन ॥ ७८ ॥

चलिते—जाते समय; **चरणे**—चरणकमलों पर; **नूपुर**—नूपुर; **बाजे**—बजने लगी; **झन्झन्**—झन झन; **शुनि'**—सुनकर; **चमकित**—आश्चर्यचकित हो गया; **हैल**—हो गया; **पिता**—अपने पिता का; **मातार**—और माता का; **मन**—मन।

अनुवाद

जब बालक बाहर जा रहा था, तो उसके चरणकमलों से नुपुर की ध्वनि आ रही थी। यह सुनकर पिता तथा माता दोनों ही आश्चर्यचकित हो गये।

মিশ্র কহে,—এই বড় অদ্ভুত কাহিনী ।
শিশুর শূন্য-পদে কেনে নূপুরের ধ্বনি ॥৭৯॥

मिश्र कहे,—एइ बड़ अद्भुत काहिनी ।
शिशुर शून्य-पदे केने नूपुरेर ध्वनि ॥ ७९ ॥

मिश्र कहे—जगन्नाथ मिश्र ने कहा; **एइ बड़**—यह है बहुत; **अद्भुत**—अद्‌भुत; **काहिनी**—घटना; **शिशुर**—शिशु की; **शून्य-पदे**—नंगे पैरो से; **केने**—किस प्रकार; **नूपुरेर**—नूपुर; **ध्वनि**—ध्वनि।

अनुवाद

जगन्नाथ मिश्र ने कहा, "यह बड़ी अद्भुत घटना है। मेरे पुत्र के नंगे पाँवों से नूपुरों की ध्वनि कैसे आ रही है?"

शची कहे,—आर एक अद्भुत देखिल ।
दिव्य दिव्य लोक आसि' अङ्गन भरिल ॥८०॥

शची कहे,—आर एक अद्भुत देखिल ।
दिव्य दिव्य लोक आसि' अङ्गन भरिल ॥८०॥

शची कहे—माता शची ने कहा; **आर**—अन्य; **एक**—एक; **अद्भुत**—अद्भुत; **देखिल**—मैंने देखा; **दिव्य**—दिव्य; **दिव्य**—दिव्य; **लोक**—लोग; **आसि'**—वहाँ आ रहे; **अङ्गन**—आंगन; **भरिल**—भर गया।

अनुवाद

माता शची ने कहा, "मैंने भी एक और आश्चर्य देखा है। स्वर्गलोक से लोग उतरे चले आ रहे थे और पूरे आँगन में भीड़ लगी थी।

किबा कोलाहल करे, बुझिते ना पारि ।
काहाके वा स्तुति करे—अनुमान करि ॥८१॥

किबा कोलाहल करे, बुझिते ना पारि ।
काहाके वा स्तुति करे—अनुमान करि ॥८१॥

किबा—क्या; **कोलाहल**—कोलाहल; **करे**—वे करते हैं; **बुझिते**—समझने के लिए; **ना**—नहीं; **पारि**—मैं समर्थ हूँ; **काहाके**—किसको; **वा**—अथवा; **स्तुति**—स्तुति; **करे**—वे करते हैं; **अनुमान**—अनुमान; **करि**—मैं करती हूँ।

अनुवाद

"उन्होंने जोर-जोर से कुछ शब्द किया जिसे मैं नहीं समझ पाई। मेरा अनुमान है कि वे किसी की स्तुति कर रहे थे।"

मिश्र बले,—किछु हउक्, चिन्ता किछु नाइ ।
विश्वम्भरेर कुशल हउक्,—एइ मात्र चाइ ॥८२॥

मिश्र बले,—किछु हउक्, चिन्ता किछु नाइ ।
विश्वम्भरेर कुशल हउक्,—एइ मात्र चाइ ॥ ८२ ॥

मिश्र बले—जगन्नाथ मिश्र ने उत्तर दिया; **किछु हउक्**—जो कुछ भी हो; **चिन्ता किछु नाइ**—चिन्ता मत करो; **विश्वम्भरेर**—विश्वम्भर की; **कुशल**—कुशलता; **हउक्**—होने दो; **एइ**—यह; **मात्र**—मात्र; **चाइ**—मैं चाहता हूँ।

अनुवाद

जगन्नाथ मिश्र ने उत्तर दिया, "इसकी परवाह मत करो। चिन्ता की कोई बात नहीं है। विश्वम्भर सदैव कुशल रहे। यही मेरी कामना है।"

एक-दिन मिश्र पुत्रेर चापल्य देखिया ।
धर्म-शिक्षा दिल बहु भर्त्सना करिया ॥ ८३ ॥
एक-दिन मिश्र पुत्रेर चापल्य देखिया ।
धर्म-शिक्षा दिल बहु भर्त्सना करिया ॥ ८३ ॥

एक-दिन—एक दिन; **मिश्र**—जगन्नाथ मिश्र; **पुत्रेर**—अपने पुत्र का; **चापल्य**—चपल व्यवहार; **देखिया**—देखकर; **धर्म-शिक्षा**—धार्मिक शिक्षा; **दिल**—दी; **बहु**—बहुत; **भर्त्सना**—डाँट; **करिया**—कर।

अनुवाद

एक अन्य अवसर पर जगन्नाथ मिश्र ने अपने बेटे की चपलता देखकर उसे खूब फटकारा और फिर नैतिकता की शिक्षा दी।

रात्रे स्वप्न देखे,—एक आसि' ब्राह्मण ।
मिश्रेरे कहये किछु स-रोष वचन ॥ ८४ ॥
रात्रे स्वप्न देखे,—एक आसि' ब्राह्मण ।
मिश्रेरे कहये किछु स-रोष वचन ॥ ८४ ॥

रात्रे—रात को; **स्वप्न देखे**—उन्होंने स्वप्न देखा; **एक**—एक; **आसि'**—आते हुए; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण को; **मिश्रेरे**—जगन्नाथ मिश्र के पास; **कहये**—बोला; **किछु**—कुछ; **स-रोष**—क्रोध से; **वचन**—शब्द।

अनुवाद

उसी रात को जगन्नाथ मिश्र ने सपना देखा कि एक ब्राह्मण आकर क्रोध में उनसे ये वचन कह रहा है :

"मिश्र, तुमि पुत्रेर तत्त्व किछुइ ना जान ।
भर्त्सन-ताड़न कर,—पुत्र करि' मान" ॥ ८५ ॥

"मिश्र, तुमि पुत्रेर तत्त्व किछुइ ना जान ।
भर्त्सन-ताड़न कर,—पुत्र करि' मान" ॥ ८५ ॥

मिश्र—मेरे प्यारे जगन्नाथ मिश्र; **तुमि**—तुम; **पुत्रेर**—अपने पुत्र का; **तत्त्व**—सत्य; **किछुइ**—कुछ; **ना**—नहीं; **जान**—जानते; **भर्त्सन**—झिड़कना; **ताड़न**—ताड़ना; **कर**—तुम करते हो; **पुत्र**—पुत्र; **करि'**—उसको; **मान**—तुम मानते हो।

अनुवाद

"हे प्रिय मिश्र, तुम अपने पुत्र के बारे में कुछ भी नहीं जानते। तुम उसे अपना पुत्र समझकर फटकारते और प्रताड़ित करते हो।"

मिश्र कहे,—देव, सिद्ध, मुनि केने नय ।
ये से बड़ हउक् मात्र आमार तनय ॥ ८६ ॥

मिश्र कहे,—देव, सिद्ध, मुनि केने नय ।
ये से बड़ हउक् मात्र आमार तनय ॥ ८६ ॥

मिश्र कहे—जगन्नाथ मिश्र ने उत्तर दिया; **देव**—देव; **सिद्ध**—सिद्ध योगी; **मुनि**—महान् सन्त पुरुष; **केने नय**—ऐसा हो सकता है या नहीं भी; **ये से**—जो कुछ; **बड़**—बड़ा; **हउक्**—वह हो; **मात्र**—मात्र; **आमार**—मेरा; **तनय**—पुत्र।

अनुवाद

जगन्नाथ मिश्र ने उत्तर दिया, "यह बालक देवता, योगी या सन्त पुरुष है, तो हुआ करे। मुझे इसकी परवाह नहीं कि वह क्या है, क्योंकि मैं उसे अपना पुत्र ही मानता हूँ।

पुत्रेर लालन-शिक्षा—पितार स्व-धर्म ।
आमि ना शिखाले कैछे जनिबे धर्म-मर्म ॥ ८७ ॥

पुत्रेर लालन-शिक्षा—पितार स्व-धर्म ।
आमि ना शिखाले कैछे जनिबे धर्म-मर्म ॥ ८७ ॥

पुत्रेर—पुत्र का; **लालन**—पालन पोषण; **शिक्षा**—शिक्षा; **पितार**—पिता का; **स्व-धर्म**—कर्तव्य; **आमि**—यदि मैं; **ना**—नहीं; **शिखाले**—शिक्षा दूँ; **कैछे**—कैसे; **जनिबे**—वह जानेगा; **धर्म-मर्म**—धर्म का मर्म।

अनुवाद

"यह पिता का कर्तव्य है कि वह अपने पुत्र को धर्म तथा नैतिकता की शिक्षा दे। यदि मैं इसे यह शिक्षा नहीं दूँगा तो यह जानेगा कैसे?"

विप्र कहे,—पुत्र यदि दैव-सिद्ध हय ।
स्वतः-सिद्ध-ज्ञान, तबे शिक्षा व्यर्थ हय ॥ ८८ ॥

विप्र कहे,—पुत्र यदि दैव-सिद्ध हय ।
स्वतः-सिद्ध-ज्ञान, तबे शिक्षा व्यर्थ हय ॥ ८८ ॥

विप्र कहे—ब्राह्मण ने उत्तर दिया; **पुत्र**—पुत्र; **यदि**—यदि; **दैव**—दिव्य; **सिद्ध**—सिद्ध; **हय**—हो; **स्वतः-सिद्ध-ज्ञान**—स्व-प्रकाशित पूर्ण ज्ञान; **तबे**—तब; **शिक्षा**—शिक्षा; **व्यर्थ**—व्यर्थ; **हय**—हो जाती है।

अनुवाद

ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "यदि तुम्हारा पुत्र स्वयं तेजोमय पूर्ण ज्ञान से युक्त दिव्य योगी है, तो तुम्हारी शिक्षा का क्या लाभ है?"

तात्पर्य

जगन्नाथ मिश्र ने जिस ब्राह्मण को सपने में देखा था, उसने यह बतलाया कि तुम्हारा पुत्र सामान्य मनुष्य नहीं है। यदि वह दिव्य पुरुष है, तो उसमें स्वयं तेजोमय ज्ञान होना चाहिए और तब उसे शिक्षा देने की कोई आवश्यकता नहीं होगी।

मिश्र कहे,—"पुत्र केने नहे नारायण ।
तथापि पितार धर्म—पुत्रेर शिक्षण" ॥ ८९ ॥

मिश्र कहे,—"पुत्र केने नहे नारायण ।
तथापि पितार धर्म—पुत्रेर शिक्षण" ॥ ८९ ॥

मिश्र कहे—जगन्नाथ मिश्र ने उत्तर दिया; **पुत्र**—मेरा पुत्र; **केने**—हो सकता है; **नहे**—क्यों नहीं; **नारायण**—नारायण; **तथापि**—तथापि; **पितार**—पिता का; **धर्म**—कर्तव्य; **पुत्रेर**—पुत्र का; **शिक्षण**—शिक्षण।

अनुवाद

जगन्नाथ मिश्र ने कहा, "चाहे मेरा पुत्र सामान्य पुरुष न होकर नारायण ही क्यों न हो, तो भी पिता का कर्तव्य है कि अपने पुत्र को शिक्षा दे।"

এই-মতে দুঁহে করেন ধর্মের বিচার ।
বিশুদ্ধ-বাত্সল্য মিশ্রের, নাহি জানে আর ॥৯০॥

এइ-মতে দুঁহে করেন ধর্মের বিচার ।
বিশুদ্ধ-বাত্সল্য মিশ্রের, নাহি জানে আর ॥ ৯০॥

এइ-মতে—उस प्रकार; **दुँहे**—वे दोनों; **करेन**—करते हैं; **धर्मेर**—धर्म का; **विचार**—विचार; **विशुद्ध**—विशुद्ध; **वात्सल्य**—वात्सल्य; **मिश्रेर**—जगन्नाथ मिश्र का; **नाहि**—नहीं; **जाने**—वे जानते थे; **आर**—और कुछ।

अनुवाद

इस तरह स्वप्न में जगन्नाथ मिश्र तथा ब्राह्मण में धर्म विषयक विचार-विमर्श होता रहा। फिर भी जगन्नाथ मिश्र शुद्ध वात्सल्य रस में निमग्न रहे और वे दूसरा कुछ जानना नहीं चाहते थे।

तात्पर्य

श्रीमद्भागवत (१०.८.४५) में कहा गया है, "पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की पूजा समस्त वेदों और उपनिषदों में उत्कृष्ट स्तोत्रों के द्वारा और सात्त्विक विधि से सांख्य योग के माध्यम से महापुरूषों द्वारा की जाती है। उन भगवान् कृष्ण को माता यशोदा तथा नन्द महाराज ने अपना नन्हा-सा बेटा माना।" इसी प्रकार जगन्नाथ मिश्र चैतन्य महाप्रभु को अपना प्रिय नन्हा बेटा मान रहे थे, यद्यपि उनकी पूजा विद्वान ब्राह्मणों तथा सन्त पुरुषों द्वारा बड़े ही आदर के साथ की जाती है।

এত শুনি' দ্বিজ গেলা হঞা আনন্দিত ।
মিশ্র জাগিয়া হইলা পরম বিস্মিত ॥৯১॥

एत शुनि' द्विज गेला हञा आनन्दित ।
मिश्र जागिया हइला परम विस्मित ॥ ९१ ॥

एत शुनि'—इतना सुनने के बाद; **द्विज**—ब्राह्मण; **गेला**—लौट गया; **हञा**—होकर; **आनन्दित**—अत्यन्त प्रसन्न; **मिश्र**—जगन्नाथ मिश्र; **जागिया**—जागकर; **हइला**—हो गये; **परम**—परम; **विस्मित**—विस्मित।

अनुवाद

जगन्नाथ मिश्र से बातें करने के बाद अत्यन्त प्रसन्न होकर वह ब्राह्मण चला गया और जब जगन्नाथ मिश्र अपने स्वप्न से जगे, तो वे अत्यधिक विस्मित थे।

बन्धु-बान्धव-स्थाने स्वप्न कहिल ।
शुनिया सकल लोक विस्मित हइल ॥ ९२ ॥

बन्धु-बान्धव—बन्धु-बान्धव की; **स्थाने**—उपस्थिति में; **स्वप्न**—स्वप्न; **कहिल**—कहा; **शुनिया**—सुनने के बाद; **सकल**—सब; **लोक**—लोग; **विस्मित**—चकित; **हइल**—हो गये।

अनुवाद

उन्होंने अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों से अपना स्वप्न कह सुनाया और वे सब इसे सुनकर अत्यन्त विस्मित हुए।

एइ मत शिशु-लीला करे गौरचन्द्र ।
दिने दिने पिता-मातार बाड़ाय आनन्द ॥ ९३ ॥

एइ—इस; **मत**—प्रकार; **शिशु-लीला**—बाल्य लीलाएँ; **करे**—करते हैं; **गौरचन्द्र**—श्री गौर हरि; **दिने दिने**—दिनो-दिन; **पिता-मातार**—अपने माता पिता का; **बाड़ाय**—वे बढ़ाते हैं; **आनन्द**—आनन्द।

अनुवाद

इस तरह गौरहरि ने अपनी बाल-लीलाएँ सम्पन्न कीं और दिन-प्रतिदिन वे अपने माता-पिता के आनन्द को बढ़ाते रहे।

कत दिने मिश्र पुत्रेर हाते खड़ि दिल ।
अल्प दिने द्वादश-फला अक्षर शिखिल ॥९४॥

कत दिने मिश्र पुत्रेर हाते खड़ि दिल ।
अल्प दिने द्वादश-फला अक्षर शिखिल ॥ ९४॥

कत दिने—कुछ दिनों के बाद; **मिश्र**—जगन्नाथ मिश्र; **पुत्रेर**—अपने पुत्र के; **हाते**—हाथ में; **खड़ि**—चाक; **दिल**—दे दिया; **अल्प**—बहुत थोड़े; **दिने**—दिन; **द्वादश-फला**—द्वादश अक्षर (बारह खड़ी); **अक्षर**—अक्षर; **शिखिल**—सीखा।

अनुवाद

कुछ दिनों के बाद जगन्नाथ मिश्र ने अपने पुत्र का हातेखड़ी संस्कार सम्पन्न करके उसकी प्रारम्भिक शिक्षा का शुभारम्भ कर दिया। महाप्रभु ने कुछ ही दिनों में सारे अक्षर और संयुक्त अक्षर सीख लिए।

तात्पर्य

बारह *फला* अक्षरों का संयोग होता है, जिसमें रेफ, मूर्धन्य, ण, दन्तव्य, न, म, य, र, ल, व, ऋ, ॠ, ऌ तथा ॡ आते हैं। *हातेखड़ी* प्रारम्भिक शिक्षा की शुरूआत होती है। चार या पाँच वर्ष की आयु में किसी शुभ दिन विद्यारम्भ होता है, जिस दिन भगवान् विष्णु की पूजा के बाद शिक्षक बालक को एक खड़िया पेंसिल देता है। फिर हाथ पकड़कर फर्श पर बड़े-बड़े अक्षरों (अ, आ, इ, इत्यादि) को लिखना बताता है। जब बालक कुछ लिखने लगता है, तो उसे स्लेट दी जाती है। फिर बालक दो अक्षरों का संयोग सीखता है, जिसे *फला* कहते हैं, जिसे प्रारम्भिक शिक्षा का अन्त समझा जाता है।

बाल्यलीला-सूत्र एइ कैल अनुक्रम ।
इहा विस्तारियाछेन दास-वृन्दावन ॥९५॥

बाल्यलीला-सूत्र एइ कैल अनुक्रम ।
इहा विस्तारियाछेन दास-वृन्दावन ॥ ९५॥

बाल्य-लीला-सूत्र—बाल्य लीला की रूपरेखा; **एइ**—यह; **कैल**—किया; **अनुक्रम**—अनुक्रम में; **इहा**—यह; **विस्तारियाछेन**—विस्तार से व्याख्या की है; **दास-वृन्दावन**—वृन्दावनदास ठाकुर।

अनुवाद

यह श्री चैतन्य महाप्रभु की बाल-लीलाओं की रूपरेखा है, जिसे यहाँ क्रमबद्ध करके प्रस्तुत किया गया है। वृन्दावन दास ठाकुर ने पहले ही अपनी पुस्तक *चैतन्य-भागवत* में इन लीलाओं का विस्तार से वर्णन किया है।

অতএব এই-লীলা সঙ্ক্ষেপে সূত্র কৈল ।
পুনরুক্তি-ভয়ে বিস্তারিয়া না কহিল ॥৯৬॥

অতএব এই-লীলা সঙ্ক্ষেপে সূত্র কৈল ।
পুনরুক্তি-ভয়ে বিস্তারিয়া না কহিল ॥ ৯৬ ॥

অতএব—অতএব; **এই-লীলা**—ये लीलाएँ; **সঙ্ক্ষেপে**—संक्षेप में; **সূত্র**—रूपरेखा; **কৈল**—की; **পুনর্-উক্তি**—दोहराने ; **ভয়ে**—के डर से; **বিস্তারিয়া**—विस्तृत व्याख्या; **না**—नहीं; **কহিল**—कहता हूँ।

अनुवाद

इसलिए मैंने केवल संक्षिप्त सारांश दिया है। पुनरुक्ति के भय से मैंने इस विषय को विस्तार से नहीं दिया।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥৯৭॥

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ৯৭ ॥

শ্রী-রূপ—श्रील रूप गोस्वामी; **রঘুনাথ**—श्री रघुनाथ दास गोस्वामी; **পদে**—के चरणकमलों पर; **যার**—जिनकी; **আশ**—आशा; **চৈতন্য-চরিতামৃত**—*चैतन्य चरितामृत* ग्रन्थ; **কহে**—कहता हूँ; **কৃষ্ণ-দাস**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की स्तुति करते हुए और

सदैव उनकी कृपा की आकांक्षा करते हुए मैं कृष्णदास उन्हीं के चरणचिह्नों का अनुसरण करते हुए श्रीचैतन्य-चरितामृत का वर्णन कर रहा हूँ।

इस प्रकार श्रीचैतन्य-चरितामृत आदिलीला के चौदहवें अध्याय का भक्तिवेदान्त-तात्पर्य पूर्ण हुआ, जिसमें चैतन्य महाप्रभु की बाल-लीलाओं का वर्णन हुआ है ।